facebook.com/thebharatshri
twitter.com/thebharatshri
website thebharatshri

राष्ट्र को एक सूत्र में बांधते हैं हम

भारत श्री

राष्ट्रीय हिंदी साप्ताहिक

सोमवार, 09 फरवरी 2026 ● वर्ष 7 ● अंक 30 ● मूल्यः 5 रुपए

एपस्टीन फाइल्स और सत्ता के अंधेरे कमरे

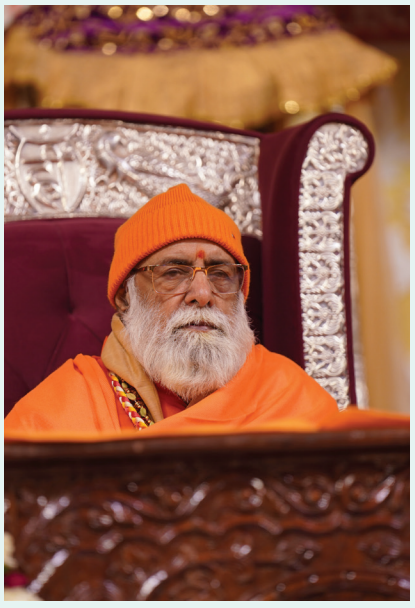

ब्रह्मर्षियों को दिया है सारा ज्ञान

पेज-10-11

सद्गुरु वाणी

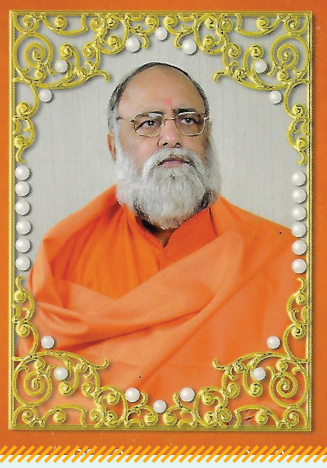

जिन असाध्य रोगों का इलाज इस जगत में नहीं है, वे रोग दिव्य पाठ से सहज दूर होते हैं। इस तथ्य को स्वयं वैज्ञानिक जगत प्रमाणों के साथ स्वीकार कर रहा है।

●

परमात्मा की नजर में सभी भाई-बहन बराबर हैं। परमात्मा जाति, धर्म, देश, सम्प्रदाय से पार है। हमें सभी भाई-बहनों को समान दृष्टि से देखना चाहिए।

●

प्रभु कृपा के आलोक से निर्धनता को सम्पन्नता में परिवर्तित किया जा सकता है। इस आलोक में मां लक्ष्मी की कृपाओं का वास है।

वंदे मातरम के लिए नया प्रोटोकॉल

राष्ट्रगीत पर केंद्र का बड़ा फैसला,विपक्ष बोला-सरकार भावनाओं से खेल रही

@ भारतश्री ब्यूरो

केंद्र सरकार ने राष्ट्रगीत 'वंदे मातरम्' को लेकर नए दिशानिर्देश जारी कर दिए हैं। गृह मंत्रालय के 28 जनवरी के आदेश के बाद यह मुद्दा एक बार फिर राष्ट्रीय बहस के केंद्र में आ गया है। आदेश के मुताबिक अब सरकारी कार्यक्रमों, स्कूलों और औपचारिक आयोजनों में वंदे मातरम् बजाया जाएगा और इस दौरान वहां मौजूद हर व्यक्ति का खड़ा होना अनिवार्य होगा। सरकार का कहना है कि यह कदम राष्ट्रगीत के सम्मान और उसकी ऐतिहासिक भूमिका को फिर से स्थापित करने के लिए उठाया गया है, जबकि आलोचक इसे राजनीति से जोड़कर देख रहे हैं।गृह मंत्रालय के आदेश में साफ किया गया है कि यदि किसी कार्यक्रम में राष्ट्रगीत 'वंदे मातरम्' और राष्ट्रगान जन गण मन दोनों प्रस्तुत किए जाते हैं, तो पहले वंदे मातरम् गाया या बजाया जाएगा। इसके बाद राष्ट्रगान होगा। दोनों ही स्थितियों में लोगों को सावधान मुद्रा में खड़ा रहना होगा। यह पहली बार है जब केंद्र सरकार ने राष्ट्रगीत के गायन और प्रस्तुति को लेकर इतने विस्तृत और स्पष्ट प्रोटोकॉल जारी किए हैं।

स्कूलों में बदलेगा दिन की शुरुआत का स्वर

नए दिशानिर्देशों का सबसे बड़ा असर स्कूलों पर पड़ने वाला है। आदेश के अनुसार अब सभी स्कूलों में दिन की शुरुआत राष्ट्रगीत वंदे मातरम् के गायन से होगी। इसके साथ ही यह भी तय किया गया है कि वंदे मातरम् के सभी छह अंतरे गाए जाएंगे, जिनकी कुल अवधि लगभग 3 मिनट 10 सेकंड है। अब तक अधिकांश जगहों पर केवल पहले दो अंतरे ही गाए जाते थे।सरकार का तर्क है कि वंदे मातरम् केवल एक गीत नहीं, बल्कि स्वतंत्रता संग्राम की आत्मा है। स्कूलों में इसके नियमित गायन से बच्चों में राष्ट्रप्रेम और इतिहास के प्रति सम्मान की भावना मजबूत होगी। शिक्षा जगत से जुड़े कई लोग इस फैसले को सकारात्मक बता रहे हैं, वहीं कुछ का कहना है कि राष्ट्रभावना को आदेश से नहीं, बल्कि समझ और संवाद से मजबूत किया जाना चाहिए।

किन मौकों पर अनिवार्य होगा वंदे मातरम्

गृह मंत्रालय के 10 पन्नों के आदेश में यह भी बताया गया है कि किन-किन अवसरों पर वंदे मातरम् का गायन या वादन अनिवार्य होगा। इनमें तिरंगा फहराने के कार्यक्रम, राष्ट्रपति के आगमन और उनके राष्ट्र के नाम संबोधन से पहले और बाद, राज्यपालों के आगमन और भाषण, तथा ऐसे आधिकारिक कार्यक्रम शामिल हैं, जहां संवैधानिक पदों पर आसीन लोग मौजूद हों।इसके अलावा पद्म पुरस्कार जैसे सिविलियन अवॉर्ड समारोहों में, जहां राष्ट्रपति की उपस्थिति होती है, वहां भी वंदे मातरम् बजाया जाएगा। मंत्रियों या अन्य प्रमुख व्यक्तियों की मौजूदगी वाले कुछ गैर-औपचारिक लेकिन महत्वपूर्ण कार्यक्रमों में भी इसे सामूहिक रूप से गाया जा सकता है, बशर्ते पूरा सम्मान और शिष्टाचार बनाए रखा जाए। मंत्रालय ने यह भी स्पष्ट किया है कि हर संभव परिस्थिति की सूची देना व्यावहारिक नहीं है।

सिनेमा हॉल को छूट

नए नियमों में सिनेमा हॉल को स्पष्ट रूप से छूट दी गई है। यानी अब सिनेमाघरों में फिल्म शुरू होने से पहले वंदे मातरम् बजाना या दर्शकों का खड़ा होना अनिवार्य नहीं होगा। इसी तरह यदि किसी न्यूजरील या डॉक्यूमेंट्री फिल्म के हिस्से के रूप में राष्ट्रगीत का प्रयोग किया जाता है, तो दर्शकों के लिए खड़ा होना जरूरी नहीं होगा।गृह मंत्रालय का कहना है कि ऐसी परिस्थितियों में खड़ा होना कार्यक्रम या प्रदर्शन में अव्यवस्था पैदा कर सकता है।

केवल आधिकारिक संस्करण ही मान्य

आदेश में यह भी कहा गया है कि अब से वंदे मातरम् का केवल आधिकारिक संस्करण ही गाया या बजाया जाएगा। किसी भी तरह के संशोधित, संक्षिप्त या अनधिकृत संस्करण की अनुमति नहीं होगी। सरकार का मानना है कि इससे राष्ट्रगीत की गरिमा बनी रहेगी और किसी तरह की गलत व्याख्या या विवाद से बचा जा सकेगा।

वंदे मातरम् का ऐतिहासिक सफर

वंदे मातरम् की रचना बंकिम चंद्र चटर्जी ने 7 नवंबर 1875 को अक्षय नवमी के दिन की थी। यह गीत पहली बार 1882 में उनके उपन्यास 'आनंदमठ' के हिस्से के रूप में प्रकाशित हुआ। धीरे-धीरे यह गीत स्वतंत्रता आंदोलन का प्रतीक बन गया।1896 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में रवींद्रनाथ टैगोर ने इसे मंच से गाया। यह पहला अवसर था जब वंदे मातरम् राष्ट्रीय मंच पर गूंजा। उस सभा में मौजूद हजारों लोग भावुक हो गए थे।

MN DIVINE

ORDER ALL TYPES OF :

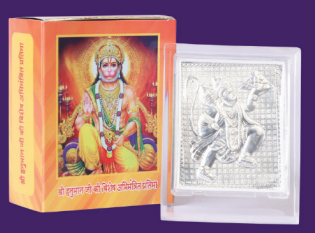

- POOJA SAMAGRI,
- AYURVEDIC MEDICINE
- AND PRATIMA.

NOW GET AT YOUR HOME ON

MNDIVINE.COM

ORDER NOW

https://mndivine.com/

HELPLINE : 9667793986
(10AM TO 6PM, MON-SAT)

राष्ट्र को एक सूत्र में बांधते हैं हम
भारत श्री

दिल्ली से लोग गायब हो रहे हैं

क्या देश की राजधानी सच में सुरक्षित है?

@ सौम्या चौबे

सपनों का शहर, सत्ता का केंद्र, देश की राजधानी। वही दिल्ली जहां हर दिन हजारों लोग बेहतर भविष्य की उम्मीद लेकर घर से निकलते हैं। लेकिन 2026 की शुरुआत में सामने आए आंकड़े एक डरावनी सच्चाई की ओर इशारा कर रहे हैं। लोग घर से निकल तो रहे हैं, पर लौट नहीं रहे।साल 2026 के पहले सिर्फ 27 दिनों में दिल्ली से 807 लोग रहस्यमय तरीके से लापता हो गए। यानी औसतन हर दिन 54 लोग। यह कोई सामान्य आंकड़ा नहीं, बल्कि एक गंभीर चेतावनी है।

महिलाओं और नाबालिग लड़कियों पर सबसे बड़ा खतरा

लापता लोगों में करीब दो-तिहाई महिलाएं और लड़कियां हैं। इनमें भी सबसे ज्यादा संख्या 12 से 18 साल की नाबालिग लड़कियों की है।यानी वह उम्र, जब पढ़ाई, सपनों और सुरक्षा की सबसे ज्यादा जरूरत होती है।NCRB और विभिन्न सामाजिक संगठनों की रिपोर्ट बताती है कि यह केवल गुमशुदगी नहीं, बल्कि एक संगठित अपराध श्रृंखला का हिस्सा है।

कैसे फंसाई जाती हैं लड़कियां

रिसर्च और केस स्टडीज से यह साफ हो चुका है कि ज्यादातर मामलों में लड़कियों को जबरदस्ती अगवा नहीं किया जाता।तरीके बेहद चालाक और भरोसा तोड़ने वाले होते हैं,फर्जी नौकरी के ऑफर। शादी या प्यार का झांसा। मॉडलिंग, डांस, होटल या स्पा में काम का वादाNCRB और NGO स्टडीज के अनुसार 60% से ज्यादा मामलों में आरोपी कोई अजनबी नहीं, बल्कि जान-पहचान का व्यक्ति होता है। यही वजह है कि परिवार अक्सर खतरे को समय रहते पहचान नहीं पाते।

दिल्ली क्यों बनती है पहला ठिकाना

जांच एजेंसियों और रेस्क्यू ऑपरेशन्स से सामने आया है कि अधिकतर मामलों में-लड़की को पहले अपने राज्य से बाहर लाया जाता है। दिल्ली या किसी बड़े शहर को ट्रांजिट पॉइंट बनाया जाता है। फिर उसे रेड-लाइट एरिया, डांस बार, स्पा, होटल नेटवर्क या ऑनलाइन एस्कॉर्ट रैकेट में धकेल दिया जाता है। कुछ मामलों में जबरन शादी कराकर भी Sexual Exploitation किया जाता है।NCRB के आंकड़े बताते हैं कि ट्रैफिकिंग से रेस्क्यू की गई महिलाओं में करीब 36% को सेक्स के लिए मजबूर किया गया।यह समस्या नई नहीं, लेकिन अब खतरनाक रूप ले चुकी है। दिल्ली में गुमशुदगी कोई नई समस्या नहीं है।

2015 से 2025 के बीच-55,594 बच्चे और बच्चियां दिल्ली से गायब हुए। इनमें से 6,931 आज तक वापस नहीं लौटे यानी हर 10 में से 1 बच्चा हमेशा के लिए खो गया।यह आंकड़ा किसी एक साल या सरकार का नहीं, बल्कि एक दशक की सामूहिक नाकामी की कहानी है।

सवाल सिर्फ गुमशुदगी का नहीं

आज सवाल यह नहीं है कि लोग क्यों गायब हो रहे हैं।असल सवाल यह है कि क्या दिल्ली सच में सुरक्षित है?दिल्ली में-हजारों CCTV कैमरे PCR वैन,कंट्रोल रूम,स्मार्ट सिटी सिस्टम,महिला सुरक्षा ऐप्स सब मौजूद हैं। फिर भी लोग गायब हैं।तो क्या यह सिर्फ इत्तेफाक है? या फिर हमारी सुरक्षा व्यवस्था का Collective Failure?

पुलिस सिस्टम की सीमाएं

पुलिस अधिकारियों के मुताबिक कई मामलों में शिकायत देर से दर्ज होती है। परिवार बदनामी के डर से शुरुआत में चुप रहता है। राज्य से बाहर जाने पर केस और जटिल हो जाता है। लेकिन विशेषज्ञ मानते हैं कि समस्या सिर्फ संसाधनों की नहीं, संवेदनशीलता और समन्वय की कमी की भी है।ट्रैफिकिंग नेटवर्क राज्य और सीमाओं से परे काम करता है, जबकि जांच अक्सर स्थानीय दायरे में सिमट जाती है।

समाज की चुप्पी भी जिम्मेदार

इस पूरे संकट में समाज की भूमिका भी सवालों के घेरे में है।नौकरी का ऑफर सुनकर कोई जांच नहीं करता। नाबालिग लड़की अकेले शहर जा रही है, फिर भी सवाल नहीं। सोशल मीडिया रिश्तों को बिना परखे स्वीकार कर लिया जाता है। अपराधी इसी चुप्पी और भरोसे का फायदा उठाते हैं।जब देश की राजधानी में हर दिन दर्जनों लोग गायब हो रहे हों,जब नाबालिग लड़कियां सबसे आसान शिकार बन रही हों,तो यह सिर्फ एक खबर नहीं रहती।यह आपात चेतावनी बन जाती है।यह चेतावनी सरकार के लिए, पुलिस के लिए और समाज के लिए भी। विशेषज्ञों के अनुसार अब आधे-अधूरे उपाय काफी नहीं-Missing मामलों को High Priority Crime माना जाए ,ट्रैफिकिंग को रोकने के लिए राज्यों के बीच रियल-टाइम समन्वय। सोशल मीडिया और जॉब प्लेटफॉर्म्स की सख्त निगरानी। स्कूलों और कॉलेजों में जागरूकता कार्यक्रम। शिकायत दर्ज कराने की प्रक्रिया को सरल और संवेदनशील बनाना और सबसे जरूरी-लापता व्यक्ति को आंकड़ा नहीं, इंसान समझा जाए।

हर 17 मिनट में एक दरिंदगी और हर दिन समाज की हार

क्या हमारी चुप्पी ही सबसे बड़ा अपराध बन चुकी है?

@ आनंद मीणा

आज का भारत कई विरोधाभासों के बीच खड़ा है। एक तरफ डिजिटल इंडिया, स्टार्टअप्स, चांद और मंगल की बातें हैं, तो दूसरी तरफ ऐसी खबरें हैं, जो हर दिन इंसान को भीतर से खोखला कर देती हैं। सवाल अब यह नहीं है कि अपराध क्यों बढ़ रहे हैं, सवाल यह है कि क्या अपराध इसलिए खत्म नहीं हो रहे क्योंकि हमने उन्हें सामान्य मान लिया है? भ्रष्टाचार अब शर्म की बात नहीं रही, वह समझदारी कहलाने लगा है।गाली-गलौज अब असभ्यता नहीं, रोज़मर्रा की भाषा बन गई है।चोरी-चाकरी अब अपराध नहीं, मैनेजमेंट स्किल मानी जाती है।और बलात्कार?इतनी खबरें आ चुकी हैं कि समाज सुन्न हो गया है। अब न गुस्सा आता है, न सिहरन। बस एक आह भरकर अगली खबर पर बढ़ जाते हैं।

आंकड़े जो सिर्फ संख्या नहीं, चेतावनी हैं

सरकारी आंकड़ों के मुताबिक, 2023 में भारत में हर 17 मिनट में एक बलात्कार हुआ। यानी रोज़ औसतन 85 से 90 घटनाएं।लेकिन यह पूरी तस्वीर नहीं है।विशेषज्ञ और सामाजिक संगठन मानते हैं कि 90 प्रतिशत से ज्यादा बलात्कार के मामले कभी रिपोर्ट ही नहीं होते।कारण साफ हैं-समाजिक बदनामी का डर,

परिवार की इज्जत और पीड़िता पर ही सवाल उठाने वाली मानसिकता। यानी जो दिख रहा है, वह सिर्फ हिमखंड का सिरा है। असली भयावहता उससे कहीं ज्यादा गहरी है।

सबसे डरावनी सच्चाई

इस पूरे मुद्दे का सबसे दर्दनाक पहलू यह है कि 90 प्रतिशत से ज्यादा मामलों में अपराधी कोई अजनबी नहीं होता। वह घर का सदस्य होता है,रिश्तेदार होता है,पड़ोसी, दोस्त, शिक्षक या परिचित। यानी जिस समाज में बेटी को घर में सुरक्षित कहा जाता है,वहीं घर उसके लिए सबसे असुरक्षित जगह बन जाता है। POCSO एक्ट के तहत दर्ज मामलों का विश्लेषण बताता है कि सबसे ज्यादा निशाना 12 से 18 साल की लड़कियां बनी हैं।और चिंता की बात सिर्फ पीड़ित नहीं हैं,आरोपियों की उम्र भी तेजी से घट रही है।पिछले कुछ वर्षों में 10 से 17 साल के आरोपियों की संख्या तेजी से बढ़ी है।यह कोई अचानक पैदा हुई हिंसा नहीं है।यह सालों की गलत दिशा में जाती परवरिश का नतीजा है।

परवरिश की चूक, समाज की कीमत

आज माता-पिता का फोकस अक्सर एक ही सवाल पर सिमट गया है-बच्चा कितना कमा पाएगा?लेकिन यह शायद ही पूछा जाता है कि-बच्चा कैसा इंसान बनेगा?हिंसक कंटेंट की आसान पहुंच,पोर्नोग्राफी की बिना रोक-टोक उपलब्धता,मोबाइल स्क्रीन पर अनियंत्रित दुनिया,और नैतिक शिक्षा की लगभग अनुपस्थिति। इन सबने मिलकर एक ऐसा वातावरण बनाया है,जहां संवेदना कमजोर और हिंसा सामान्य होती जा रही है।

सत्ता और व्यवस्था की भूमिका

अपराध सिर्फ समाज की बीमारी नहीं,वह व्यवस्था की चुप्पी से भी फलता-फूलता है।जांच में देरी,न्याय प्रक्रिया की धीमी गति,रसूखदार आरोपियों को संरक्षण और पीड़ित से ज्यादा आरोपी की चिंता,यह सब मिलकर अपराधियों को एक संदेश देता है कि डरो मत, सिस्टम तुम्हारे साथ है। जब सजा का डर खत्म हो जाता है,तो अपराध सिर्फ दोहराया नहीं जाता,वह और क्रूर हो जाता है।

मीडिया और समाज की संवेदनहीनता

एक समय था जब ऐसी खबरें समाज को झकझोर देती थीं।आज वे बस ब्रेकिंग न्यूज बनकर रह गई हैं।थोड़ी देर बहस,कुछ ट्वीट्स,और फिर अगली सनसनी।पीड़िता का दर्द TRP में बदल जाता है,और समाज अपनी जिम्मेदारी से मुक्त महसूस करने लगता है। रेप कोई अचानक हुआ अपराध नहीं यह समझना जरूरी है कि बलात्कार कोई क्षणिक गुस्से का परिणाम नहीं होता।यह सालों की चुप्पी गलत सामाजिक संदेश ,सत्ता की शह और समाज की संवेदनहीनता इन सबका सामूहिक परिणाम होता है।जब छोटी-छोटी गलतियों को नजरअंदाज किया जाता है,जब अश्लील मजाक पर हंसी आती है,जब पीड़िता से सवाल पूछे जाते हैं,तभी अपराध की जमीन तैयार होती है।

जहरीली होती सामाजिक हवा

आज पूरी सोसाइटी धीरे-धीरे जहरीली होती जा रही है।जहां सहमति का मतलब कमजोर पड़ गया है। रिश्तों की पवित्रता खो रही है और ताकत को अधिकार समझा जाने लगा है। यह सिर्फ महिलाओं की समस्या नहीं,यह पूरे समाज का नैतिक संकट है।

सिर्फ कानून सख्त करने से यह समस्या खत्म नहीं होगी। जरूरत है-संवेदनशील और तेज़ न्याय प्रणाली की,स्कूल स्तर पर नैतिक और भावनात्मक शिक्षा कीडिजिटल कंटेंट पर जिम्मेदार निगरानी कीऔर सबसे जरूरी,समाज की सामूहिक आत्ममंथन की। हमें यह मानना होगा कि अगर अपराध सामान्य लगने लगे हैं, तो समस्या अपराधियों से ज्यादा हमारी चुप्पी में है। आखिरी सवाल,जब भ्रष्टाचार शिष्टाचार बन जाए,जब हिंसा मनोरंजन हो जाए,और जब बलात्कार खबर बनकर गुजर जाए-तो दोष किसका है?

अपराधियों का,या उस समाज का जो सब देखता है,सब जानता है,लेकिन चुप रहता है? क्योंकि इतिहास गवाह है-जब समाज चुप होता है,तो अपराध बोलने लगते हैं।

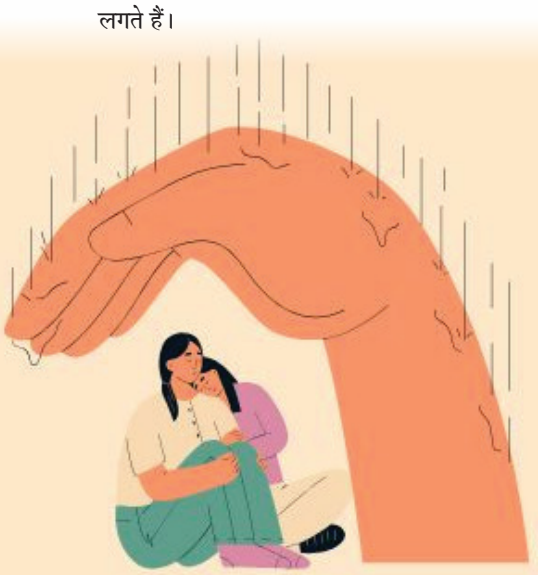

राष्ट्र को एक सूत्र में बांधते हैं हम
भारत श्री

प्यार का बाज़ार और टूटते रिश्ते

Valentine's Day अब भावना नहीं, एक कारोबार है

@ मनीष पांडेय

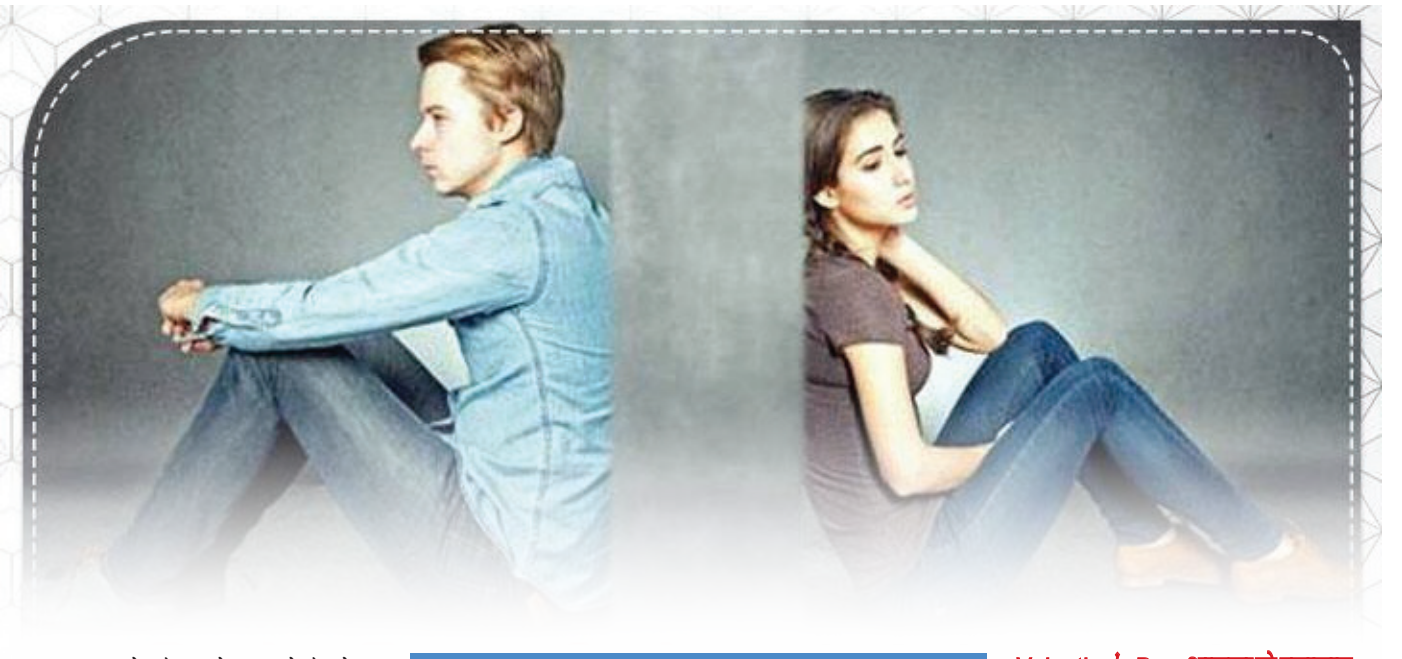

कभी Valentine's Day का मतलब होता था,रिश्तों में भावना, वफ़ादारी और आपसी समझ को याद करना। यह दिन यह सोचने का मौका देता था कि हम अपने रिश्तों को कितना समय देते हैं, कितना समझते हैं और कितना निभाते हैं। लेकिन आज Valentine's Day वह नहीं रहा। अब यह एक भावनात्मक उत्सव नहीं, बल्कि एक बड़ा आर्थिक इवेंट बन चुका है-ऐसा इवेंट, जिसमें प्यार से ज़्यादा मुनाफ़ा मायने रखता है।आज Valentine's Day एक multi-billion dollar annual economic event है। अकेले भारत में Valentine's Day का बाज़ार 30,000 करोड़ रुपये से ज़्यादा का हो चुका है और हर साल यह लगातार बढ़ रहा है। गिफ्ट्स, चॉकलेट्स, ज्वेलरी, होटल बुकिंग, डेट नाइट्स, सरप्राइज़ पैकेज हर चीज़ की कीमत बढ़ रही है। प्यार अब महसूस करने की चीज़ कम और दिखाने की चीज़ ज़्यादा बन गया है।

प्यार का डिजिटलीकरण और डेटिंग ऐप्स की भूमिका

इस बदलते दौर में डेटिंग ऐप्स ने बड़ी भूमिका निभाई है। Tinder, Bumble, Hinge जैसे ऐप्स ने रिश्तों को आसान नहीं, बल्कि तेज़ बना दिया है। एक swipe, एक match और फिर अगला swipe।Tinder अकेला ही 2024 में 1.94 बिलियन डॉलर का revenue generate कर चुका है। इसके 60 मिलियन monthly active users और 9.6 मिलियन paying customers हैं। यह आंकड़े सिर्फ़ एक कंपनी के हैं। सोचिए, पूरा डेटिंग इंडस्ट्री कितना बड़ा हो चुका है।इन ऐप्स ने लोगों को मिलने का मौका दिया, इसमें कोई शक नहीं। लेकिन इसी के साथ रिश्तों की गहराई कम होती चली गई। जब विकल्प बहुत ज़्यादा हों, तो किसी एक पर टिकना मुश्किल हो जाता है। यही आज के रिश्तों की सबसे बड़ी समस्या बन चुकी है।

प्यार से ज़्यादा दिखावा

कुछ रिसर्च और सर्वे ने Valentine's Day की इस चमक-दमक के पीछे की एक डार्क रियलिटी भी सामने रखी है। पिछले वैलेंटाइन डे से पहले आए एक सर्वे में बताया गया कि जापान, दक्षिण कोरिया और भारत जैसे देशों में रिश्तों में प्यार से ज़्यादा दिखावा बढ़ गया है।भारत जैसे देश में पहले दिखावा कम था, इसलिए रिश्तों में संतुष्टि ज़्यादा थी। अब तस्वीर बदल रही है। Ipsos 2025 के सर्वे के मुताबिक सिर्फ़ 63 प्रतिशत भारतीय अपनी love life से संतुष्ट हैं। 64 प्रतिशत लोग मानते हैं कि उनका पार्टनर उनसे प्यार तो करता है, लेकिन romantic या sexual satisfaction का आंकड़ा सिर्फ़ 57 प्रतिशत है।यानी प्यार है, पर अधूरा है। साथ है, पर जुड़ाव कमजोर है। रिश्ते चल रहे हैं, लेकिन मन नहीं मिल रहे।

Gen Z और रिश्तों की नई प्राथमिकताएं

Times की एक रिपोर्ट बताती है कि 23 प्रतिशत Gen Z ने माना कि उनके दोस्तों में one-night stands बहुत आम हो गए हैं। Gen Z की प्राथमिकताओं में financial stability पहले आती है, प्यार बाद में।यह बदलाव अचानक नहीं आया। बढ़ती महंगाई, करियर का दबाव, प्रतिस्पर्धा और भविष्य की असुरक्षा ने युवाओं को practical बना दिया है। लेकिन जब प्यार को secondary बना दिया जाता है, तो रिश्ते भी उसी तरह superficial हो जाते हैं।एक्सपर्ट्स का मानना है कि प्यार को कम प्राथमिकता देने की वजह से cheating के मामले तेजी से बढ़े हैं। 2024 के DatingAdvice.com सर्वे के अनुसार 93 प्रतिशत Gen Z ने कभी न कभी अपने रिश्ते में cheating की बात स्वीकार की। यह आंकड़ा चौंकाने वाला है, बल्कि डराने वाला भी।

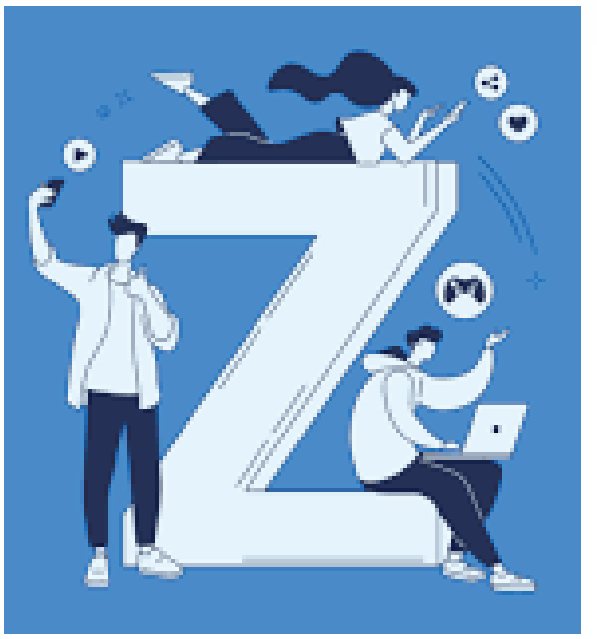

जब भरोसा टूटता है

Cheating सिर्फ़ एक शब्द नहीं है। यह भरोसे की हत्या है। जब कोई धोखा देता है, तो सिर्फ़ रिश्ता नहीं टूटता, इंसान अंदर से टूट जाता है।India Today की एक रिपोर्ट बताती है कि दिल टूटने की वजह से साल 2013 से 2022 के बीच 10 साल में कुल 74,180 लोगों ने आत्महत्या की। इनमें 13प्रतिशत मामलों में आत्महत्या की वजह extra-marital affair था। 10 प्रतिशत लोगों ने इसलिए जान दी क्योंकि उन्हें शक था कि उनके पार्टनर का किसी और से संबंध है।इसका मतलब यह हुआ कि हर दिन औसतन 45 लोग सिर्फ़ दिल टूटने की वजह से आत्महत्या कर रहे हैं। यह आंकड़ा Valentine's Day के गुलाब और चॉकलेट्स से कहीं ज़्यादा डरावना है।

रिश्ते आसान नहीं हुए, सस्ते हो गए

आज सबसे बड़ा झूठ यह है कि रिश्ते आसान हो गए हैं। सच यह है कि रिश्ते सस्ते हो गए हैं।आज रिश्ते replaceable हैं। कोई नहीं समझा, तो दूसरा मिल जाएगा। कोई साथ नहीं चला, तो swipe कर लेंगे। कोई उम्मीद पर खरा नहीं उतरा, तो उसे disposable समझ लिया जाता है।प्यार अब patience नहीं सिखाता, बल्कि instant gratification मांगता है। अगर सामने वाला हमारी उम्मीदों पर तुरंत खरा नहीं उतरा, तो हम आगे बढ़ जाते हैं। रिश्तों में संघर्ष, समझौता और समय देने की जगह अब तुलना और विकल्प आ गए हैं।

Valentine's Day: भावना से व्यापार तक

Valentine's Day अब सिर्फ़ प्रेम का दिन नहीं रहा। यह pressure का दिन बन गया है। सोशल मीडिया पर perfect couples, expensive gifts और grand surprises देखकर लोग अपने रिश्तों को कमतर आंकने लगते हैं।यह दिन अब यह नहीं पूछता कि तुम एक-दूसरे के लिए क्या महसूस करते हो, बल्कि यह पूछता है कि तुमने कितना खर्च किया, कितना दिखाया और कितना पोस्ट किया।इसका असर खासकर युवाओं पर पड़ रहा है। जिनके पास पैसा नहीं है, वे खुद को कमतर महसूस करते हैं। जिनके रिश्ते simple हैं, उन्हें लगता है कि उनका प्यार अधूरा है।

सवाल Valentine's Day से नहीं, सोच से है

समस्या Valentine's Day मनाने में नहीं है। समस्या उस सोच में है, जिसने प्यार को एक product बना दिया है।प्यार कोई subscription नहीं है जिसे cancel किया जा सके। यह कोई ऐप नहीं है जिसे delete करके नया install कर लिया जाए। यह एक रिश्ता है, जिसे समय, समझ और ईमानदारी चाहिए।अगर रिश्तों में emotion, वफ़ादारी और respect नहीं होगी, तो कोई भी Valentine's Day उन्हें बचा नहीं सकता। और अगर ये चीज़ें हैं, तो साल का हर दिन Valentine's Day हो सकता है।अंत मेंआज ज़रूरत इस बात की है कि हम प्यार को फिर से महसूस करना सीखें, न कि सिर्फ़ दिखाना। रिश्तों को निभाने की आदत डालें, न कि बदलने की।क्योंकि सच यही है रिश्ते आज swipeable हो गए हैं,लेकिन टूटने के बाद दर्द अभी भी उतना ही real है।

राष्ट्रीय हिंदी साप्ताहिक

भारत श्री

राष्ट्र को एक सूत्र में बांधते हैं हम

सोमवार, 09 फरवरी 2026 , विक्रम संवत 2080

लोकतंत्र की दहलीज़ पर टला एक बड़ा संकट

पिछले दो दिनों में भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था एक कदम और आगे बढ़ते बढ़ते रुक गई। ११ वर्ष पहले भी प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह को सदन में बोलने से रोका गया था उस समय भी मैंने मनमोहन सिंह का खुला पक्ष लिया था और मैं इसे गलत माना था लेकिन पिछले दो दिनों की घटना उस ११ वर्ष पहले की घटना से कई गुना अधिक खतरनाक होने जा रही थी जो किसी कारण से रुक गई। बहुत बारीकी से योजना बनाई गई थी और योजना अनुसार ६ महिला सांसदों को इस कार्य के लिए बाकायदा तैयार किया गया था जिनमे आर सुधा ज्योति मनी वर्षा गायकवाड गण ब्रायन ठाकुर के काव्य और शोभा बचाओ के नाम सुने जा रहे हैं । अभी तक यह पता नहीं है कि उन्हें राहुल के कराते की ट्रेनिंग दी गई थी या नहीं लेकिन यह बात साफ है कि सभी पूरी तरह तैयार होकर गई थी और ऐसी संभावना है कि वह प्रधानमंत्री को चूड़ियां भेंट कर सकती थी लेकिन यह भेद लोकसभा अध्यक्ष को किसी तरह मालूम हो गया और उन्होंने प्रधानमंत्री को आने से रोक दिया। तत्काल ही प्रियंका गांधी ने भी स्पष्ट किया कि प्रधानमंत्री को शारीरिक क्षति पहुंचाने की कोई योजना नहीं थी । मैं मानता हूं कि ऐसी कोई योजना नहीं थी लेकिन यदि यह घटना इस तरह हुई होती तो किसी भी तरह का विस्फोट हो सकता था सुरक्षा गार्ड बल प्रयोग कर सकते थे अफरा तफरी मच सकती थी लड़की हूं लड़ सकती हूं का पहला प्रयोग भी हो सकता था ।परिणाम कितने भी भयंकर हो सकते थे और शायद दलदली लोकतंत्र का अंतिम अध्याय इस घटना के बाद पूरा हो जाता लेकिन देखिए धीरे-धीरे लोकतंत्र कहां तक पहुंचता है। यदि इस लोकतंत्र के दलदल को दलविहीन लोकतंत्र में नहीं बदला गया तो हम इस प्रकार की घटनाओं की और अधिक पुनरावृत्ति देखने के लिए बाध्य होंगे। क्योंकि सोनिया गांधी किसी भी सीमा तक जाने से परहेज नहीं करेंगी।

ज्ञानेंद्र आर्य

शक्ति का नैतिक दिवालियापन

@ **अनुराग पाठक**

30 जनवरी को जारी हुई एपस्टीन फाइल्स ने दुनिया की लोकतांत्रिक और नैतिक संरचना को हिला दिया। यह सिर्फ अपराध जगत से नहीं, बल्कि सत्ता, विज्ञान, कूटनीति और वैश्विक नेतृत्व के चरित्र से जुड़ा खुलासा है। अमेरिकी जस्टिस डिपार्टमेंट द्वारा सार्वजनिक किए गए लगभग 30 लाख पन्नों ने उन चेहरों की परतें उतार दीं जिन्हें दुनिया ने वर्षों तक सम्मान और विश्वास के मुकुट पहनाए रखा।इन दस्तावेज़ों में डोनाल्ड ट्रम्प का नाम 38,000 बार, और व्लादिमिर पुतिन का नाम 1,005 बार दर्ज होना सिर्फ एक तथ्य नहीं,यह उस सिस्टम की सड़ी हुई जड़ों का प्रमाण है जो सत्ता को कानून से ऊपर मानने की आदत डाल चुका है। यही कारण है कि अमेरिका से लेकर यूरोप तक, और ब्रिटेन से नॉर्वे तक—इस्तीफों की आँधी चल पड़ी है। यह आँधी किसी सरकार को गिराए या न गिराए, पर उसने दुनिया को यह साफ बता दिया है कि लोकतंत्र की ऊँची इमारतें भी भीतर से खोखली हो सकती हैं।

एपस्टीन नेटवर्क की भयावहता केवल इस बात में नहीं कि इसमें नाबालिग लड़कियों का यौन शोषण हुआ, बल्कि इस बात में है कि इस नेटवर्क का हिस्सा बनने वाले लोग वही थे जिन पर पूरी दुनिया ने भरोसा किया। सत्ता, राजनीति और अरबपतियों की दुनिया में भ्रष्टाचार, लालच और अनैतिकता नया विषय नहीं है। लेकिन जब इस नेटवर्क में विज्ञान और बौद्धिक नेतृत्व के सबसे बड़े चेहरे वे लोग जिनका काम समाज को दिशा देना, भविष्य बनाना और ज्ञान की रोशनी से अंधेरे को काटना है।उनमें से कुछ भी शामिल मिलें, तो सवाल और भी बड़ा हो जाता है।

स्टीफन हॉकिंग जैसे महान वैज्ञानिकों पर लगे आरोप इस सवाल को और गहरा करते हैं। हॉकिंग रेडिएशन की खोज करने वाले, ब्रह्मांड की समझ को नई ऊँचाइयों पर ले जाने वाले, और आधुनिक विज्ञान के सबसे बड़े प्रतीकों में शामिल हॉकिंग उन्हीं पर यह आरोप कि उन्हें मासूम बच्चियों को नाचते हुए देखना अच्छा लगता था। यह आरोप साबित हों या न हों, पर उन्होंने उस धारणा पर चोट की है कि बुद्धि नैतिकता की गारंटी होती है।

एपस्टीन फाइल्स के खुलासे सिर्फ अपराध से लड़ने का मामला नहीं हैं। यह मामला उस वैश्विक सत्ता संरचना का है जो दशकों से अपने ही बनाए नियमों को तोड़ती रही और आम लोगों से ऊपर उठती रही। यह वह प्रणाली है जिसमें एक आम नागरिक के लिए कानून लोहे की तरह कठोर होता है, पर सत्ता में बैठे लोगों के लिए मोम की तरह पिघल जाता है। दुनिया भर में जो इस्तीफे हो रहे हैं, वे इस बात का प्रमाण हैं कि इस बार मामला दबाया नहीं जा सकता। लोकतंत्र के लिए यह अवसर है कि वह पुनर्मूल्यांकन करे,उस व्यवस्था का, जिस पर उसके नागरिक भरोसा करते हैं। क्योंकि सवाल सिर्फ जेफ्री एपस्टीन का नहीं है। सवाल यह है कि एपस्टीन जैसा नेटवर्क दुनिया के सबसे सुरक्षित, सबसे शक्तिशाली गलियारों में पनप कैसे गया?क्या खुफिया एजेंसियों को पता नहीं था?क्या उन देशों की सरकारें इतने वर्षों तक आंखें मूँदकर बैठी थीं?और अगर बैठी थीं, तो क्या यह केवल चूक थी या जानबूझकर किया गया मौन?

सत्ता जब अपराध को अपने संरक्षण में ले लेती है, तब अपराध सिर्फ अपराध नहीं रहता; वह संरचना का हिस्सा बन जाता है। यही एपस्टीन प्रकरण का सबसे बड़ा भयावह पहलू है।आज दुनिया एक नैतिक संकट के सामने खड़ी है। यह संकट किसी एक देश या किसी एक नेता का नहीं। यह सभ्यता के चरित्र का संकट है। जब सत्ता, धन और बुद्धि—तीनों मिलकर मानवता के खिलाफ इस्तेमाल हों, तो संकट की जड़ें बहुत गहरी होती हैं।एपस्टीन फाइल्स हमारे सामने यह कठोर सबक रखती हैं कि पारदर्शिता ही लोकतंत्र की एकमात्र सांस है।अगर नेतृत्व के चेहरे पर पर्दा पड़ा रहे तो जनता सिर्फ अंधेरे में चलती है।आज इस पर्दे का उठना जरूरी था कठोर सच इसलिए जरूरी था ताकि टूटे हुए भरोसे को फिर से जोड़ा जा सके।अब दुनिया को तीन बड़े फैसले लेने होंगे

पहला, सत्ता और प्रभाव रखने वाले हर व्यक्ति को कानून के सामने समान रूप से जवाबदेह बनाया जाए।दूसरा, ऐसे नेटवर्कों पर वैश्विक स्तर पर निगरानी और सहयोग की व्यवस्था बने।तीसरा, नैतिकता को नेतृत्व का अनिवार्य मानदंड बनाया जाए—न कि केवल ज्ञान, धन या चुनाव जीतने की क्षमता को।क्योंकि अगर दुनिया के सबसे ताक़तवर और विद्वान लोग ही अंधेरे में डूब जाएँ, तो सभ्यता का भविष्य किसके हाथों में सुरक्षित रहेगा ?एपस्टीन प्रकरण ने दुनिया को डरा दिया है, लेकिन उसी डर में एक चेतावनी भी छिपी है कि सत्ता तभी सुरक्षित है जब उसके हाथों में इंसानियत हो।और यह चेतावनी जितनी कठोर है, उतनी ही समय की मांग भी।

जुबानी तीर

“ अगर एपस्टीन फाइल्स में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का नाम किसी भी संदर्भ में आया है, तो सरकार को देश को पूरी सच्चाई बतानी चाहिए। सवाल पूछना देशद्रोह नहीं है। पारदर्शिता लोकतंत्र की बुनियाद है और प्रधानमंत्री को इस पर स्पष्ट जवाब देना चाहिए।

पवन खेड़ा (कांग्रेस प्रवक्ता)

“ एपस्टीन फाइल्स में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नाम का संदर्भ पूरी तरह भ्रामक है। यह एक दोषी अपराधी के निजी ई-मेल और कल्पनात्मक टिप्पणियां हैं, जिनका कोई तथ्यात्मक या कानूनी आधार नहीं है। ऐसे दावों को अत्यंत तिरस्कार के साथ खारिज किया जाना चाहिए।

रंधीर जायसवाल (विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता)

“ एपस्टीन से जुड़ी फाइल्स यह दिखाती हैं कि सिस्टम कैसे सालों तक बच्चों के शोषण को रोकने में नाकाम रहा। यह केवल अपराध की बात नहीं है, यह नैतिक और संस्थागत विफलता का मामला है। पीड़ितों को न्याय दिलाना हमारी प्राथमिक जिम्मेदारी है।

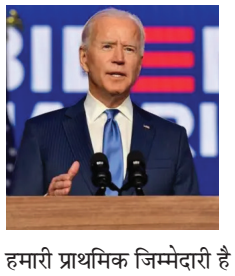

जो बाइडन (अमेरिकी राष्ट्रपति)

स्वामी, मुद्रक एवं प्रकाशक डॉ. महिमा मक्कर द्वारा एच0टी0 मीडिया, प्लॉट नं. 8, उद्योग विहार, ग्रेटर नोएडा-9 उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं जी. एफ. 5/115, गली नं. 5 संत निरंकारी कालोनी, दिल्ली-110009 से प्रकाशित । संपादकः महिमा मक्कर, RNI No. DELHI/2019/77252, संपर्क 011-43563154

विज्ञापन एवं वार्षिक सब्सक्रिप्शन के लिए ऑफिस के पते पर सम्पर्क करें या फिर इन नम्बरों - 9667793987 या 9667793985 पर बात करें या इस पर media@ bharatshri.com ईमेल करें।

राष्ट्र को एक सूत्र में बांधते हैं हम
भारत श्री

शल्य चिकित्सिता

भारतीय चिकित्सा परंपरा की वह विद्या जिसने सर्जरी को जन्म दिया

आज जब आधुनिक ऑपरेशन थिएटर, लेज़र सर्जरी और रोबोटिक तकनीक की बात होती है, तो अक्सर यह मान लिया जाता है कि शल्य चिकित्सा आधुनिक युग की देन है। लेकिन इतिहास बताता है कि सर्जरी की जड़ें हजारों साल पुरानी हैं और भारत इस विद्या का एक प्रमुख केंद्र रहा है। प्राचीन भारत में जिस चिकित्सा शाखा ने सर्जरी को एक व्यवस्थित विज्ञान का रूप दिया, उसे शल्य चिकित्सिता कहा गया।शल्य चिकित्सिता केवल बीमारी के इलाज की विधि नहीं थी, बल्कि यह शरीर, मन और जीवन की रक्षा का एक गंभीर और गहन विज्ञान था। यह आयुर्वेद की आठ प्रमुख शाखाओं में से एक मानी जाती है और इसका सबसे बड़ा आधार ग्रंथ सुश्रुत संहिता है।

शल्य चिकित्सिता का अर्थ

'शल्य' शब्द का अर्थ है वह वस्तु या कारण जो शरीर में पीड़ा, कष्ट या विकार उत्पन्न करे।यह शल्य बाहरी भी हो सकता है जैसे कांटा, तीर, पत्थर, फोड़ा और आंतरिक भी हो सकता है जैसे रोग, फोड़ा, सूजन या विकार।

'चिकित्सिता' का अर्थ है उपचार

इस प्रकार शल्य चिकित्सिता का सीधा अर्थ हुआ शरीर में उत्पन्न पीड़ा या विकार को शल्य क्रिया द्वारा दूर करने की चिकित्सा विधि।सरल शब्दों में कहें तो यह वही विद्या थी, जिसे आज हम सर्जरी कहते हैं। चिकित्सा का विकास वैदिक काल से ही प्रारंभ हो गया था। ऋग्वेद और अथर्ववेद में घाव भरने, हड्डी जोड़ने और रक्तस्राव रोकने के उल्लेख मिलते हैं। लेकिन इस विद्या को व्यवस्थित, वैज्ञानिक और विस्तृत रूप देने का श्रेय महर्षि सुश्रुत को जाता है।महर्षि सुश्रुत को आज पूरी दुनिया Father of Surgery के रूप में जानती है। उन्होंने शल्य चिकित्सा को प्रयोग, अनुभव और नियमों के आधार पर विकसित किया।

सुश्रुत संहिता और शल्य चिकित्सिता

सुश्रुत संहिता शल्य चिकित्सिता का सबसे प्रामाणिक ग्रंथ है। इसमें लगभग—120 अध्याय,6 मुख्य स्थान,300 से अधिक शल्य क्रियाएं,125 से ज्यादा शल्य उपकरण,1000 से अधिक रोगों का वर्णन मिलता है।सुश्रुत संहिता में यह स्पष्ट किया गया है कि बिना शल्य चिकित्सिता के आयुर्वेद अधूरा है। सुश्रुत कहते हैं जिस वैद्य को शल्य का ज्ञान नहीं, वह युद्ध में बिना हथियार के सैनिक के समान है। शल्य चिकित्सिता में रोगों का वर्गीकरण शल्य चिकित्सिता में रोगों को बहुत व्यवस्थित ढंग से वर्गीकृत किया गया था। जैसे घाव,फोड़े,नासूर,हड्डी टूटना,मोतियाबिंद,मूत्राशय की पथरी,बवासीर,भगंदर,प्रसव संबंधी जटिलताएं। इन सभी के लिए अलग-अलग शल्य विधियां निर्धारित थीं।

प्राचीन काल की प्रमुख शल्य क्रियाएं

यह जानकर आश्चर्य होता है कि हजारों साल पहले भी भारत में जटिल सर्जरी की जाती थी।

1. प्लास्टिक सर्जरी

नाक काट दिए जाने की सजा उस समय आम थी। सुश्रुत संहिता में नाक, कान और होंठ के पुनर्निर्माण की विधि विस्तार से बताई गई है। यही आधुनिक plastic surgery की नींव है।

2. मोतियाबिंद ऑपरेशन

आंख के मोतियाबिंद को सुई जैसी उपकरण से हटाने की विधि का वर्णन मिलता है।

3. हड्डी जोड़ना

फ्रैक्चर, डिसलोकेशन और हड्डी टूटने के लिए पट्टियों, लकड़ी के सहारे और विशेष तकनीकें बताई गई थीं।

4. पथरी निकालना

मूत्राशय की पथरी निकालने की जटिल शल्य क्रिया का भी वर्णन सुश्रुत संहिता में मिलता है।

5. बवासीर और भगंदर की सर्जरी

इन रोगों के लिए क्षार सूत्र जैसी तकनीक विकसित की गई, जो आज भी आयुर्वेद में प्रचलित है।

शल्य उपकरणों का अद्भुत ज्ञान

शल्य चिकित्सिता में उपकरणों का ज्ञान अत्यंत उन्नत था। सुश्रुत ने 125 से अधिक शल्य उपकरणों का वर्णन किया, जिनमें शामिल हैं,चाकू,कैंची,सुई,चिमटी,आरी,नलिका। इन उपकरणों के आकार पशु-पक्षियों की चोंच और नखों से प्रेरित थे। यह बताता है कि उस समय प्रकृति से सीखकर विज्ञान विकसित किया गया।

सर्जरी से पहले की तैयारी

शल्य चिकित्सिता केवल ऑपरेशन तक सीमित

नहीं थी। इसमें ,रोगी की मानसिक तैयारी शरीर की शुद्धि,आहार-विहार,औषधीय प्रयोग,दर्द नियंत्रण पर विशेष ध्यान दिया जाता था। शराब, भांग और विशेष औषधियों का प्रयोग बेहोशी या पीड़ा कम करने के लिए किया जाता था, जो आज के anesthesia की प्रारंभिक अवधारणा मानी जा सकती है।

शल्य चिकित्सक के गुण

सुश्रुत के अनुसार एक शल्य चिकित्सक में ये गुण होना आवश्यक थे-स्थिर हाथ,तीव्र बुद्धि,करुणा,धैर्य,अभ्यास,स्वच्छता की समझ। उन्होंने यह भी कहा कि बिना अभ्यास के शल्य क्रिया नहीं करनी चाहिए। इसके लिए कद्दू, तरबूज, चमड़े और लकड़ी पर अभ्यास कराया जाता था।

नैतिकता और शल्य चिकित्सा

शल्य चिकित्सिता में नैतिकता को बहुत महत्व दिया गया। रोगी की सहमति, गोपनीयता और जीवन रक्षा सर्वोपरि मानी जाती थी।सुश्रुत स्पष्ट कहते हैं कि शल्य क्रिया का उद्देश्य धन या प्रसिद्धि नहीं, बल्कि रोगी को पीड़ा से मुक्त करना होना चाहिए।

शल्य चिकित्सिता का पतन और पुनर्जागरण

विदेशी आक्रमणों, औपनिवेशिक शासन और पश्चिमी चिकित्सा के प्रभाव से शल्य चिकित्सिता धीरे-धीरे हाशिए पर चली गई। अंग्रेजों ने भारतीय चिकित्सा पद्धति को अवैज्ञानिक कहकर नकार दिया।लेकिन आज फिर से आयुर्वेद और शल्य चिकित्सिता की उपयोगिता को दुनिया मानने लगी है। आधुनिक सर्जरी के कई सिद्धांत सुश्रुत संहिता से मेल खाते हैं।आज की plastic surgery, orthopedics, ophthalmology और general surgery में जिन सिद्धांतों का प्रयोग होता है, उनके मूल तत्व शल्य चिकित्सिता में मिलते हैं।यही कारण है कि कई विदेशी विश्वविद्यालयों में सुश्रुत को चिकित्सा इतिहास में विशेष स्थान दिया गया है।शल्य चिकित्सिता केवल अतीत की विद्या नहीं थी, बल्कि यह एक पूर्ण वैज्ञानिक चिकित्सा प्रणाली थी। यह बताती है कि भारत ने हजारों साल पहले ही सर्जरी को विज्ञान का दर्जा दे दिया था।आज जब हम आधुनिक चिकित्सा पर गर्व करते हैं, तो हमें यह भी याद रखना चाहिए कि उसकी नींव हमारी ही प्राचीन ज्ञान परंपरा में छिपी है।शल्य चिकित्सिता भारत की वह विरासत है, जो हमें यह सिखाती है कि विज्ञान और करुणा जब साथ चलते हैं, तभी सच्चा उपचार संभव होता है।

संत हरिहर बाबा: राम-नाम के परम रसिक

राम-नाम का स्मरण सांसारिक बंधनों से मुक्ति का सहज मार्ग है। इस नाम में डूबकर जीव सागर पार कर जाता है, और प्रीति की वृद्धि समस्त मुक्ति का सार बन जाती है। संत हरिहर बाबा ऐसे महात्मा थे, जिन्होंने राम-नाम के रस में जीवन भर लीन रहकर साधकों को दिव्य अनुभूति कराई। काशी की पावन भूमि पर गंगा जी में नाव पर निवास करते हुए, उन्होंने अटल भक्ति का ऐसा उदाहरण प्रस्तुत किया, जो संत परंपरा की अनमोल धरोहर है। राम के परम उपासक के रूप में उनकी कृपा से असंख्य जीवों को आध्यात्मिक शांति प्राप्त हुई। उनका जीवन राम-नाम की महिमा का जीवंत प्रमाण है, जहां भक्ति और विरक्ति का संगम साकार होता है।

जन्म और प्रारंभिक जीवन

संत हरिहर बाबा का जन्म बिहार प्रांत के छपरा जिले में जाफरपुर गांव में हुआ था, लगभग 150 वर्ष पूर्व एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण कुल में। उनका बचपन का नाम सेनापति तिवारी था। माता-पिता अत्यंत पवित्र विचारों वाले थे, जिनकी छाया में उनका बाल्यकाल गुजरा। दैवयोग से अल्पावस्था में ही माता-पिता का देहांत हो गया, जिससे सेनापति का मन सहसा भगवान की ओर मुड़ गया। इस घटना ने उनके जीवन को नई दिशा दी। कुछ समय तक उन्होंने सोनपुर और भागलपुर में विद्याध्ययन किया, जहां ज्ञान की ज्योति उनके हृदय में प्रज्वलित हुई।

उनके एक भाई हरिहर के देहांत की दुखद घटना सेनापति के जीवन की गति को पूरी तरह बदल देने वाली सिद्ध हुई। हरिहर की स्मृति में वे भगवान राम की पावन भूमि अयोध्या पहुंचे। वहां भगवती सरयू का दर्शन कर वे निहाल हो उठे, और राम की लीला-भूमि की श्रद्धापूर्वक वंदना की। सरयू के पावन तट पर रहकर उन्होंने कठिन तपस्या का जीवन अपनाया। कठोर उपवास और व्रतों में लीन होकर वे परमात्मा के चिंतन में डूब गए। अल्पाहार से ही संतोष करने का स्वभाव उन्होंने अपना लिया, जो उनकी विरक्ति की गहराई को दर्शाता है। राम-नाम की धारा में बहते हुए, उनका हृदय दिव्य प्रकाश से भर उठा।

काशी-निवास और गंगा-भक्ति

काशी-दर्शन की तीव्र इच्छा ने संत हरिहर बाबा को विश्वनाथ की नगरी की ओर खींचा। यहां पहुंचकर उन्होंने भगवती गंगा में नाव पर निवास करने का नियम लिया, और जीवन भर इसका पालन किया। उनकी काशी और गंगा के प्रति भक्ति असाधारण थी, जो हर पल राम-नाम के साथ जुड़ी हुई थी। काशी में वे नागवा से अस्सी घाट के बीच गंगा जी में रहते थे, कभी-कभी तुलसीघाट और संकटमोचन आदि स्थानों पर आते-जाते। यहां वे हरिहर भैया के नाम से प्रसिद्ध हुए, और उनकी नाव राम-नाम की ध्वनि से गूंजती रहती।

काशी-निवास के दौरान वे महात्मा वीतरागानंद के संपर्क में आए। उनके चरणों में हरिहर बाबा की गहन निष्ठा थी, और महात्मा की उन पर अपार कृपा बरसी। यह सत्संग उनके आध्यात्मिक जीवन की मजबूत नींव बना। शौच आदि के लिए वे गंगा के उस पार जाते, कड़ी धूप, भयानक ठंड और भारी वर्षा का सामना करते हुए अपने नियम का पालन करते रहे। कभी नाव न मिलने पर तैरकर पार जाते, जो उनकी हठयोग की गहराई को दिखाता है। वे परमहंस थे, जिन्होंने परमात्मा का अनन्य आश्रय ग्रहण किया। संसार के पदार्थों और प्राणियों में उनकी कोई ममता न रही, सब कुछ राम-मय हो गया।

दिव्य घटनाएं और चमत्कार

संतों का जीवन दिव्य घटनाओं से परिपूर्ण होता है, हालांकि वे चमत्कारों के प्रदर्शन से दूर रहते हैं। संत हरिहर बाबा के जीवन में ऐसी कई घटनाएं घटीं, जो राम-नाम की महिमा को प्रकट करती हैं। एक बार उनके तलवे में नागफनी का कांटा चुभ गया। वे शांत रहे, लेकिन जब सुना कि महाराज वीतरागानंद को भी नागफनी ने कष्ट दिया है, तो उन्होंने कहा कि नागफनी सबको कष्ट देती है, इसलिए उसे नष्ट हो जाना चाहिए। लोगों के देखते-देखते गंगा के दोनों तटों से नागफनी का अस्तित्व मिट गया। वे वाग्सिद्ध महात्मा थे, जिनके एक शब्द भी व्यर्थ न जाते।

राम-नाम में उनकी अटूट निष्ठा थी। एक बार शौच से निवृत्त होने के लिए नाव से गंगा पार जा रहे थे। जल बढ़ाव पर था, धारा वेगवान। नाव डूबने लगी, केवट ने बहुत प्रयास किया, लेकिन कुछ न हुआ। बाबा ने केवट को प्रयास बंद करने को कहा, और सबको राम-नाम जपने का आदेश दिया। पल भर में राम-नाम की शक्ति से नाव डूबने से बच गई। राम-नाम से पत्थर तैरता है, काठ की नाव का बचना कोई आश्चर्य नहीं। राम-नाम से क्या नहीं हो सकता?

वे चराचर में आत्मदर्शन करते, अद्वैत वेदांती भक्त थे। एक बार काशीनरेश का हाथी पागल होकर उपद्रव करने लगा। गंगा पार रामनगर में हाहाकार मचा, लोग भागने लगे। उन्मत्त हाथी बाबा के सामने आया, जहां वे शांतिपूर्वक राम-नाम चिंतन में लीन थे। बाबा ने कृपा-दृष्टि डाली, हाथी स्वस्थ हो गया, और आदरपूर्वक अभिवादन कर चला गया। ऐसी घटनाएं उनके जीवन में बार-बार घटतीं, जो भक्ति की दिव्यता को उजागर करतीं।

एक घटना ने उनके जीवन में परिवर्तन लाया। नागवा में एक छात्र जूता पहनकर उनकी नाव पर चढ़ आया। शिष्यों ने समझाया कि संत के सान्निध्य में ऐसा आचरण अपराध है, लेकिन छात्र ने ध्यान न दिया और साथियों के साथ उपद्रव किया। इससे क्षुब्ध होकर बाबा नागवा छोड़ अस्सी घाट चले आए। उन दिनों विश्वविद्यालय के संस्थापक महामना मदनमोहन मालवीय काशी में न थे। लौटने पर उन्होंने प्रोफेसरों सहित बाबा से क्षमा मांगी, एक पैर पर खड़े होकर। बाबा नियमों के कड़े थे, अस्सी पर ही रहे, लेकिन मालवीय जी के अनुरोध पर तुलसीघाट का जीर्णोद्धार कराने की आज्ञा दी। मालवीय जी ने इसे परम सौभाग्य माना। बाबा ने देह त्याग तक अस्सी पर गंगा में नाव पर निवास किया। रामायण-पाठ और राम-नाम कीर्तन से काशी धन्य हो उठी। भक्ति, मुक्ति, विरक्ति और शक्ति उनकी नाव पर विराजमान हो गईं।

साधना और शिक्षाएं

संत हरिहर बाबा परम संत थे, जिनके श्वास राम-नाम-कीर्तन से नियंत्रित थे। तपस्या के वे साकार विग्रह थे। काशी में पिछले 100 वर्षों में इतने बड़े तपस्वी वे ही थे। वे अरुणाचल के रमण महर्षि के उत्तरी दिव्य संस्करण थे। रमण आत्मयोगी थे, तो हरिहर परमात्मा के संयोगी। दोनों वेदांती संत और भक्त के समन्वय थे। बाबा कहा करते थे कि राम का नाम ही परम अमृत तत्व है। सन्यासी को साधारण जीवन जीना चाहिए, कथनी-करनी में समान रहना चाहिए। धन, ऐश्वर्य, मद और मान को वे साधना के बड़े बाधक मानते। वे काशीवास, गंगाजल-सेवन, सत्संग और विश्वनाथ आराधना की सीख देते। शैव और वैष्णव के समन्वय थे वे। मुक्ति की मूलभूमि सन्यास है, ऐसा उनका दृढ़ विश्वास था।

उनकी साधना की प्राणभूमि शांति थी। गूढ़ चिंतन में लीन होकर वे आत्मगत शाश्वत शांति की खोज करते। उपासना से परे वे उपास्य और सिद्ध थे। गोस्वामी तुलसीदास के तपरूप थे वे। दिगंबर वेश में गंगा में खड़े होकर सूर्य से नेत्र मिलाकर लंबे समय तक तप किया। राम और शिव के अभिन्न स्वरूप में उनकी बुद्धि स्थिर थी। जीवन के अंतिम दिनों में वे केवल गंगाजल पान करते। हरिहर आश्रम-नाव की छत पर अद्भुत शांति में राम-नाम रसास्वादन करते। उनके दर्शन से दिव्य शांति मिलती।

सम्वत् 2009 विक्रमी में आषाढ़ शुक्ल पंचमी शुक्रवार को रात साढ़े 11 बजे उन्होंने नश्वर शरीर त्यागा, और परम धाम की यात्रा की। वे निष्काम भक्त और आत्मज्ञानी संत थे।

रचनाएं

समय-समय पर उनके मुख से निकले वचन ही उनकी कृतियां हैं। इनमें राम-नाम की महिमा और भक्ति का सार समाहित है। उदाहरण के लिए, वे कहा करते थेः

"राम का नाम ही परम अमृत तत्व है।"

ऐसे वचन उनकी साधना के सार को प्रकट करते हैं। नागफनी की घटना में उन्होंने कहाः

"नागफनी सब को कष्ट देती है इसलिए उसे नष्ट ही हो जाना चाहिए।"

ये वचन उनकी वाग्सिद्धि और भक्ति की गहराई को दर्शाते हैं। उनकी रचनाएं लिखित रूप में न होते हुए भी, उनके वचनों में वेदांत और भक्ति का समन्वय झलकता है, जो साधकों को राम-नाम की ओर प्रेरित करते हैं।

राष्ट्र को एक सूत्र में बांधते हैं हम
भारत श्री

छह दशक का खामोश अपराध

फ्रांस में 79 साल का रिटायर्ड शिक्षक, 89 नाबालिगों के यौन शोषण का आरोपी

@ अभिषेक चौबे

फ्रांस एक बार फिर ऐसे अपराध के सामने खड़ा है, जिसने न सिर्फ कानून व्यवस्था बल्कि समाज की सामूहिक संवेदनशीलता पर भी गंभीर सवाल खड़े कर दिए हैं। दक्षिण-पूर्वी फ्रांस के ग्रेनोबल शहर में सामने आए इस मामले में 79 साल के एक रिटायर्ड शिक्षक पर 1960 के दशक से लेकर 2022 तक 89 नाबालिगों के साथ बलात्कार और यौन शोषण का आरोप लगा है। यह अपराध महज किसी एक देश तक सीमित नहीं था, बल्कि कई महाद्वीपों तक फैला हुआ था।मामले को सार्वजनिक करते हुए ग्रेनोबल के अभियोजक एटिएन मंटो ने पीड़ितों से आगे आने की अपील की है। आरोपी का नाम जैक लेवुग्ल है, जो पेशे से फ्रेंच भाषा का शिक्षक और गुफा अध्ययन यानी स्पेलियोलॉजी का ट्रेनर रहा है।

कई देशों में फैला अपराध का जाल

अभियोजक के अनुसार जैक लेवुग्ल ने 1967 से 2022 के बीच भारत, जर्मनी, स्विट्जरलैंड, मोरक्को, नाइजर, अल्जीरिया, फिलीपींस, कोलंबिया और फ्रांस में नाबालिगों के साथ यौन अपराध किए। जिन बच्चों और किशोरों को उसने अपना शिकार बनाया, उनकी उम्र 13 से 17 साल के बीच थी।जांच में सामने आया है कि आरोपी अपने काम और शौक की आड़ में अलग-अलग देशों की यात्रा करता था। वह खुद को शिक्षक और ट्रेनर के रूप में पेश करता, युवाओं से दोस्ती करता और फिर धीरे-धीरे उन्हें अपने जाल में फंसा लेता था। उसका भरोसेमंद और पढ़ा-लिखा चेहरा ही उसकी सबसे बड़ी ढाल था।

USB ड्राइव ने खोला राज

इस खौफनाक अपराध का पर्दाफाश तब हुआ, जब आरोपी के भतीजे को उस पर शक हुआ। भतीजे ने जैक लेवुग्ल के कमरे की तलाशी ली, जहां उसे एक USB ड्राइव मिली। इस ड्राइव में जो सामग्री थी, उसने जांचकर्ताओं को भी हिला कर रख दिया।USB ड्राइव में 15 अलग-अलग हिस्सों में विस्तार से लिखा गया था कि किस देश में, किस उम्र के नाबालिग के साथ, किस तरह का यौन अपराध किया गया। इसके साथ ही कई तस्वीरें भी थीं, जिनमें नाबालिगों के साथ उसके यौन संबंधों के सबूत मौजूद थे।इन्हीं दस्तावेजों और तस्वीरों के आधार पर जांच एजेंसियों ने 89 पीड़ितों की पहचान की। अधिकारियों का मानना है कि वास्तविक संख्या इससे भी अधिक हो सकती है, क्योंकि कई पीड़ित अब तक सामने नहीं आए हैं।

मां और मौसी की हत्या का कबूलनामा

मामले की गंभीरता यहीं खत्म नहीं होती। जांच के दौरान जैक लेवुग्ल ने दो हत्याओं को भी कबूल किया है। अभियोजक के मुताबिक उसने 1970 के दशक में अपनी कैंसर पीड़ित मां की तकिए से दम घोंटकर हत्या की थी। इसके बाद 1990 के दशक में उसने अपनी 92 साल की मौसी की भी इसी तरह हत्या कर दी।अभियोजक एटिएन मंटो ने बताया कि मौसी ने उसे यात्रा पर जाने से रोका था, जिससे वह नाराज हो गया। उसने तय किया कि वह उसे भी मार देगा। जब मौसी सो रही थी, तब उसने तकिए से उसका दम घोंट दिया।आरोपी की डायरी में भी इन दोनों हत्याओं का जिक्र मिला है। इन मामलों में अब अलग से हत्या की जांच शुरू की गई है।

अपराध को सही ठहराने की कोशिश

जांच अधिकारियों के अनुसार जैक लेवुग्ल अपने अपराधों को सही ठहराने की मानसिकता भी रखता था। उसने यह तर्क दिया कि अगर वह खुद जीवन के अंतिम चरण में ऐसी स्थिति में होता, तो वह भी चाहता कि कोई उसके साथ ऐसा ही करे। अधिकारियों का कहना है कि यह सोच उसकी विकृत मानसिकता को साफ दिखाती है।इस मामले में अभियोजक ने आरोपी का नाम सार्वजनिक करने का असाधारण फैसला लिया है। एटिएन मंटो ने पत्रकारों से कहा कि आरोपी का नाम सामने आना जरूरी है, ताकि वे पीड़ित जो अब तक चुप हैं, आगे आ सकें।जब उनसे पूछा गया कि जांच की शुरुआत में नाम क्यों नहीं बताया गया, तो उन्होंने कहा कि उस समय प्राथमिक जांच जरूरी थी। लेकिन अब जब यह स्पष्ट हो गया है कि कई पीड़ितों की पहचान अभी नहीं हो पाई है, तो नाम सार्वजनिक करना जरूरी हो गया था।

फ्रांस में पहले भी सामने आ चुके हैं ऐसे मामले

यह पहला मौका नहीं है, जब फ्रांस में इतने बड़े पैमाने पर बाल यौन शोषण का मामला सामने आया हो। मई 2024 में फ्रांस की एक अदालत ने रिटायर्ड डॉक्टर जोएल ले स्कुआर्नेक को 20 साल की सजा सुनाई थी। यह मामला भी फ्रांस के इतिहास में सबसे बड़े बाल यौन शोषण मामलों में से एक माना जाता है।

जोएल ले स्कुआर्नेक ने 1989 से 2014 के बीच 25 सालों में 299 मरीजों के साथ यौन शोषण और बलात्कार किया था। इनमें से ज्यादातर पीड़ित बच्चे थे और 256 बच्चे 15 साल से कम उम्र के थे।

अस्पतालों में होता रहा अपराध

ले स्कुआर्नेक के अधिकतर अपराध अस्पतालों में हुए, जहां वह डॉक्टर के रूप में काम करता था। वह बच्चों को एनेस्थीसिया यानी बेहोशी की दवा देकर उनके साथ यौन अपराध करता था। 2017 में उसकी गिरफ्तारी के बाद उसके घर से डायरी और नोटबुक मिलीं, जिनमें उसने खुद अपने अपराधों का विवरण लिखा था।इन दस्तावेजों में 299 पीड़ितों के नाम, तारीखें और घटनाएं दर्ज थीं। उसने अदालत में अपने सभी अपराधों को कबूल किया और कहा कि उसने बेहद घिनौने काम किए हैं।

सिस्टम की नाकामी पर सवाल

ले स्कुआर्नेक के मामले में पीड़ितों और बाल अधिकार कार्यकर्ताओं ने सिस्टम की गंभीर खामियों की ओर इशारा किया था। कई पीड़ितों ने पहले भी शिकायत की थी, लेकिन उन्हें गंभीरता से नहीं लिया गया। अस्पतालों में निगरानी की कमी और शिकायत तंत्र की कमजोरियों के कारण वह दशकों तक अपराध करता रहा।अब जैक लेवुग्ल का मामला भी उसी सवाल को फिर से सामने ला रहा है—क्या समाज और सिस्टम ऐसे अपराधियों को समय रहते रोकने में असफल हो रहे हैं?

पीड़ितों की चुप्पी और सामाजिक डर

विशेषज्ञों का कहना है कि ऐसे मामलों में पीड़ित अक्सर शर्म, डर और सामाजिक बदनामी के कारण सामने नहीं आते। जब अपराधी शिक्षक, डॉक्टर या किसी सम्मानित पेशे से जुड़ा हो, तो परिवारों का डर और बढ़ जाता है। यही वजह है कि अभियोजक बार-बार पीड़ितों से आगे आने की अपील कर रहे हैं। उनका कहना है कि सच सामने आए बिना न्याय संभव नहीं है। जैक लेवुग्ल का मामला केवल एक व्यक्ति के अपराध की कहानी नहीं है। यह उस लंबे समय तक चली चुप्पी की कहानी है, जिसमें अपराधी ने भरोसे, पद और व्यवस्था की कमजोरियों का फायदा उठाया। फ्रांस में इस समय इस मामले को लेकर गहरी चिंता है। सवाल सिर्फ सजा का नहीं, बल्कि यह समझने का भी है कि आखिर इतने सालों तक यह सब कैसे चलता रहा और किसी को भनक तक क्यों नहीं लगी। यह मामला एक कड़ी चेतावनी है कि बच्चों की सुरक्षा केवल कानून से नहीं, बल्कि सतर्क समाज, मजबूत निगरानी और समय पर कार्रवाई से ही सुनिश्चित की जा सकती है। जब तक पीड़ितों की आवाज सुनी नहीं जाएगी और सिस्टम अपनी कमियों को नहीं मानेगा, तब तक ऐसे अपराध बार-बार सामने आते रहेंगे।

ब्रह्मर्षियों को दिया है सारा ज्ञान

मां दुर्गा ने कहा कि मैंने सारा ज्ञान ब्रह्मर्षियों को दिया है। जो ब्रह्मर्षि आपको पाठ दे उसे एकाग्रता से करो। आपकी बीमारी कट जाएगी, धन आएगा, यश की प्राप्ति होगी, संतान परंपरा बनी रहेगी, ऐश्वर्य मिलेगा और अंत में मोक्ष की प्राप्ति भी हो जाएगी। ऋषि मुनि सालोंसाल तपस्या करते हैं और अपना घर छोड़ देते हैं लेकिन फिर भी उन्हें पाठ नहीं मिलता। भगवान शिव को चार लाख साल तपस्या करने के बाद दुर्गा मां ने पाठ दिया। वहीं मैं आपको सहज रूप से पाठ दे रहा हूं। इसको ध्यान से करोगे, विधिपूर्वक नियमित रूप से करोगे तो आपका कल्याण होगा। परमात्मा को कोई देख नहीं सकता और न ही कोई दिखा सकता है। केवल ब्रह्मर्षि ही साक्षात दिखा सकते हैं। अर्जुन को भी भगवान श्रीकृष्ण ने दिव्य दृष्टि प्रदान की थी तब ही वह उनके विराट रूप को देख पाया था।

तपस्या से नहीं मिलता ब्रह्मज्ञान

यदि आप मन से ध्यान करोगे तो परमात्मा को नहीं जान पाओगे क्योंकि मन अपरा है। आप तपस्या से भी नहीं जान पाओगे क्योंकि तपस्या भी तो मन ही कर रहा है। मुनि अष्टावक्र ने राजा जनक से कहा कि तू घोड़े की रकाब में पैर रख, मैं इतनी ही देर में बता दूंगा कि ब्रह्म क्या है? सतगुरु तत्त्व का ज्ञान एक पल में ही दे देते हैं।

तपस्या से आ जाता है आंखों में तेज प्रकाश

ऋषि मुनि गुफाओं में बैठकर ही तपस्या, साधना करते हैं क्योंकि साधना के फलस्वरूप उनकी आंखों में सूर्य के समान तेज प्रकाश आ जाता है। एक बार एक ऋषि एक वृक्ष के नीचे तपस्या कर रहे थे तभी एक चिड़िया ने उनके ऊपर बीट कर दी। ऋषि का ध्यान भंग हुआ और उन्होंने चिड़िया की तरफ देखा। उनके देखते ही वह चिड़िया जलकर भस्म हो गई। तब से ही यह नियम बना कि तपस्या गुफाओं में करनी चाहिए। लेकिन आपको यह तपस्या करने की आवश्यकता नहीं है, केवल पाठ करो और एकाग्रता से करो तब ही आपको ज्ञान और तत्व की प्राप्ति होगी।

कौन है इस ब्रह्मांड का नियंता

आम आदमी के मस्तिष्क में यह विचार आता है कि चन्द्रमा, सूरज, पृथ्वी और तारों को बनाने वाला कौन है। यह किसी दैवीय शक्ति ने बनाए हैं या अपने आप ही बन गए हैं, इनका नियंता कौन है जिसने इन्हें पैदा किया है? इसके बाद दूसरा विचार आता है कि विश्व का सबसे पहला ग्रंथ कौन सा है जिससे यह पता लगे कि जब दुनिया नहीं थी तब कौन था और किसने इस दुनिया को पैदा किया है। किसने ब्रह्मा, विष्णु, महेश और देवताओं को पैदा किया है? मूल बात यह भी है कि उसने पृथ्वी, आकाश, वायु, जल, अग्नि, सूरज, चन्द्रमा, तारे व ग्रह नक्षत्र क्यों बनाए? इनका अधिष्ठाता कौन है और इस चराचर जगत का संचालन कौन करता है। यह ज्ञान कहां से मिलेगा? हम कहां से आते हैं और मरने के बाद कहां जाते हैं, यह किसको पता है? हमें इस तत्व का ज्ञान कौन देगा?

कौन देगा तत्व का ज्ञान

पूरे विश्व में लगभग 4200 धर्म हैं और सब धर्मों के धर्मग्रंथ भी हैं। इनमें से मुख्य इस्लाम धर्म के ग्रंथ कुरान-ए-पाक में वर्णन है कि 'अल्लाह हो अकबर'। अल्लाह ही नियंता है। बाईबल में वर्णन है-गॉड ही परमात्मा है। वेदों में वर्णन है-एको ब्रह्म द्वितीयो नास्ति। सब कहते हैं- 'एक खुदा है, एक परमात्मा है, एक गॉड है, एक ईश्वर है लेकिन फिर भी लड़ते क्यों हैं'। सूरज एक है लेकिन इसको आफताब, दिवाकर, प्रभाकर आदि अलग-अलग नामों से जाना जाता है और इन्हीं नामों को लेकर हम लड़ते हैं। हम पूजा-पाठ करते हैं, हवन-यज्ञ करते हैं, ग्रंथों को पढ़ते हैं लेकिन फिर भी तत्व का ज्ञान नहीं मिलता है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा कि किसी तत्ववेत्ता की शरण में जाकर दंडवत प्रणाम करो और उससे निवेदन करो तब वह तुम्हें तत्व का ज्ञान प्रदान करेगा। तत्व का ज्ञान भारत की धरती पर होने वाले सत्संग के अलावा कहीं भी नहीं मिलता।

मूर्तियों में नहीं मिलता भगवान

हम मूर्तियों की पूजा करते हैं लेकिन यह सब तो हमारे द्वारा ही बनाई गई हैं। क्या इनकी पूजा करने से हमारे रोग, समस्याएं और कष्ट खत्म हो सकते हैं? क्या इनका समाधान होगा? इतना कुछ करने के बाद भी क्या किसी ने आत्मा-परमात्मा, ईश्वर, खुदा, वाहेगुरु, अकाल पुरख, नारायण, ब्रह्मा, काली, महेश, लक्ष्मी, सरस्वती को देखा है? क्या इनसे किसी का सामना हुआ है? लाखों लोग मंदिरों, मस्जिदों और गुरुद्वारों में जाते हैं फिर भी बीमारियां क्यों आती हैं? असाध्य रोगों से लोग मर रहे हैं बोर एक दूसरे को मार रहे हैं। आगे आने वाले समय में भयंकर रद्ध होने वाला है जिसमें आदमी आदमी को खाएगा। हम विभिन भाषा भाषी हैं, ईश्वर, परमात्मा, गॉड, अल्लाह वस्तुतः एकी है, यह हमें जानना चाहिए। हम परमात्मा से इसलिए मिल चाहते हैं ताकि हमारे रोग, कष्ट, दुख और समस्याएं हटें।

मायावती की सोशल इंजीनियरिंग

‘घूसखोर पंडित’ विवाद से पुरानी यादें ताजा

हाल ही में एक फिल्म या वेब सीरीज ‘घूसखोर पंडित’ के नाम पर बड़ा विवाद खड़ा हो गया है। लोग कह रहे हैं कि यह नाम ब्राह्मण समाज को बदनाम करता है और उनका अपमान करता है। जगह-जगह ब्राह्मण संगठन सड़कों पर उतर आए हैं और फिल्म पर रोक लगाने की मांग कर रहे हैं। मनोज बाजपेयी जैसे बड़े कलाकार इसमें हैं, लेकिन नाम से ही लोग नाराज हैं। उत्तर प्रदेश में यह मुद्दा राजनीतिक रंग ले चुका है क्योंकि यहां ब्राह्मण वोटरों की अच्छी तादाद है, लगभग 10 से 12 प्रतिशत। मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने भी फिल्म की टीम पर एफआईआर दर्ज करने के आदेश दिए हैं, जो दिखाता है कि सत्ताधारी भाजपा भी ब्राह्मणों को खुश रखना चाहती है। मायावती, जो बहुजन समाज पार्टी की प्रमुख हैं, ने इस मौके पर ब्राह्मणों का साथ दिया और फिल्म पर बैन की मांग की। उन्होंने सोशल मीडिया पर लिखा कि पंडितों को घूसखोर या घुसपैठिया कहना गलत है और इससे पूरे समाज में गुस्सा है। यह कदम उनकी पुरानी रणनीति की याद दिलाता है, जहां वे अलग-अलग जातियों को जोड़कर राजनीति करती हैं। आज के समय में जब 2027 के उत्तर प्रदेश चुनाव नजदीक हैं, यह विवाद पार्टियों के लिए वोट बैंक साधने का मौका बन गया है। एक तरफ भाजपा ब्राह्मणों को अपने साथ रखना चाहती है, वहीं समाजवादी पार्टी और बसपा भी इस मौके का फायदा उठाना चाहती हैं। लेकिन सवाल यह है कि क्या यह विवाद सिर्फ फिल्म का है या राजनीति का खेल? जानकार कहते हैं कि ब्राह्मण समाज हमेशा से सम्मान की बात करता आया है और अगर उन्हें लगता है कि कोई उनका मजाक उड़ा रहा है, तो वे एकजुट हो जाते हैं। इस विवाद ने पुरानी बातों को फिर से चर्चा में ला दिया है, जैसे 2007 में मायावती ने कैसे ब्राह्मणों को अपने साथ जोड़ा था। कुल मिलाकर, यह मुद्दा दिखाता है कि भारत की राजनीति में जाति और सम्मान कितने महत्वपूर्ण हैं, और कैसे एक छोटी सी फिल्म बड़ा सियासी तूफान ला सकती है।

मायावती की प्रतिक्रिया और ब्राह्मण कार्ड

मायावती ने ‘घूसखोर पंडित’ विवाद पर जोरदार प्रतिक्रिया दी है, जो उनकी सोशल इंजीनियरिंग की नई कोशिश लगती है। उन्होंने एक्स पर पोस्ट किया कि पिछले कुछ समय से उत्तर प्रदेश और पूरे देश में पंडितों को घूसखोर या घुसपैठिया कहकर उनका अपमान हो रहा है, और इससे ब्राह्मण समाज में बहुत गुस्सा है। उन्होंने केंद्र सरकार से फिल्म पर तुरंत रोक लगाने की मांग की और कहा कि बसपा इसकी कड़ी निंदा करती है। यह बयान 6 फरवरी 2026 को आया, जब विवाद चरम पर था। मायावती का यह कदम ब्राह्मणों को साधने का लगता है, क्योंकि बसपा लंबे समय से सत्ता से बाहर है और दलित वोट बैंक भी थोड़ा खिसक रहा है। जानकारों का मानना है कि मायावती 2027 चुनाव के लिए पुराना फॉर्मूला दोहरा

विवाद की शुरुआत और आज का माहौल

रही हैं, जहां दलितों के साथ ब्राह्मण और मुसलमानों को जोड़ा जाए। हाल ही में उन्होंने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के नए नियमों पर भी ब्राह्मणों की तरफ से बोला, जहां उन्होंने कहा कि किसी को बिना वजह परेशान न किया जाए। उनके जन्मदिन पर 15 जनवरी को उन्होंने वादा किया कि अगर बसपा सत्ता में आई तो ब्राह्मणों को पूरा सम्मान मिलेगा। यह सब दिखाता है कि मायावती ब्राह्मण कार्ड खेल रही हैं, लेकिन यह सिर्फ राजनीति नहीं, बल्कि उनका पुराना भावनात्मक रिश्ता भी है। 1995 के गेस्ट हाउस कांड में ब्राह्मण नेता ब्रह्मदत्त द्विवेदी ने उनकी जान बचाई थी, जिन्हें वे अपना भाई मानती थीं और राखी बांधती थीं। द्विवेदी की मौत पर मायावती रोईं भी थीं। आज बसपा में ब्राह्मण नेता जैसे सतीश चंद्र मिश्रा हैं, जो पार्टी की रणनीति बनाते हैं। लेकिन भाजपा के मंत्री जयवीर सिंह कहते हैं कि ब्राह्मण सनातनी हैं और भाजपा से दूर नहीं जाएंगे। मायावती की यह रणनीति काम करेगी या नहीं, यह समय बताएगा, लेकिन यह सोचने वाली बात है कि राजनीति में सम्मान और जाति का खेल कैसे वोट बदल सकता है।

2007 की सोशल इंजीनियरिंग का इतिहास

2007 में मायावती ने उत्तर प्रदेश की राजनीति में एक बड़ा प्रयोग किया, जिसे सोशल इंजीनियरिंग कहा गया। बसपा पहले सिर्फ दलितों की पार्टी मानी जाती थी, लेकिन मायावती ने दलितों के साथ ब्राह्मणों और मुसलमानों को जोड़ा। उन्होंने 86 ब्राह्मणों को टिकट दिया, जिसमें से 41 जीते। कुल 403 सीटों में बसपा ने 206 सीटें जीतीं और 30 प्रतिशत से ज्यादा वोट मिले। नारे बहुत मशहूर हुए, जैसे “ब्राह्मण शंख बजाएगा, हाथी बढ़ता जाएगा” और “हाथी नहीं गणेश है, ब्रह्मा विष्णु महेश है”। इन नारों ने ब्राह्मणों को लगाया कि बसपा उनका सम्मान करती है। मायावती ने ब्राह्मण भाईचारा समिति बनाई और खुद सम्मेलनों में गईं। उस समय मुलायम सिंह यादव की सरकार के खिलाफ गुस्सा था, क्योंकि वे यादवों को ज्यादा तवज्जो दे रहे थे। कांग्रेस और भाजपा दोनों कमजोर थे, तो ब्राह्मण वोटर बसपा की तरफ आए। सरकार बनने के बाद मायावती ने 7 ब्राह्मणों को मंत्री बनाया, जो उनका धन्यवाद था। यह फॉर्मूला इसलिए कामयाब हुआ क्योंकि दलितों का 80-90 प्रतिशत वोट बसपा को मिला, ब्राह्मणों का 80 प्रतिशत समर्थन आया, और मुसलमानों ने भी 17 प्रतिशत वोट दिए। गैर-यादव पिछड़ों ने भी साथ दिया। लेकिन 2012 के बाद यह फॉर्मूला टूट गया, क्योंकि भाजपा मजबूत हुई और ब्राह्मण उनके साथ चले गए। आज मायावती फिर से उसी रास्ते पर हैं, लेकिन 19 साल बाद हालात बदल चुके हैं। उस समय बसपा का हाथी चुनाव चिन्ह दलितों का प्रतीक था, लेकिन सोशल इंजीनियरिंग से यह सबका बन गया। यह इतिहास बताता है कि राजनीति में सही समय पर सही गठजोड़ कितना असरदार हो सकता है, लेकिन क्या आज वैसा ही माहौल है? यह सोचने वाली बात है।

ब्राह्मणों का समर्थन और उसके कारण

2007 में ब्राह्मणों ने बसपा का साथ क्यों दिया, यह समझना जरूरी है। उस समय उत्तर प्रदेश में ब्राह्मण समाज खुद को उपेक्षित महसूस कर रहा था। मुलायम सिंह की सरकार में यादवों को ज्यादा महत्व मिल रहा था, और ब्राह्मणों को लगता था कि उनका सम्मान नहीं हो रहा। मायावती ने इस मौके को भांपा और उन्हें बसपा से जोड़ा। उन्होंने कहा कि बसपा सबका सम्मान करती है, और ब्राह्मणों को टिकट देकर साबित किया। लगभग 80 से 90 प्रतिशत ब्राह्मण वोटर बसपा के साथ आए, जो एक बड़ा बदलाव था। कारण यह था कि ब्राह्मण समाज हमेशा से पढ़ा-लिखा और प्रभावशाली रहा है, लेकिन राजनीति में उन्हें सही जगह नहीं मिल रही थी। मायावती ने उन्हें मंत्री पद देकर सम्मान दिया, जिससे वे खुश हुए। साथ ही, बसपा की सोशल इंजीनियरिंग ने दलितों और ब्राह्मणों के बीच की दूरी कम की। लेकिन आज ब्राह्मण भाजपा के साथ हैं, क्योंकि योगी आदित्यनाथ खुद ब्राह्मण नहीं हैं लेकिन सनातन धर्म की बात करते हैं। ब्राह्मणों की आबादी यूपी में 10 प्रतिशत है, लेकिन वे वोट बैंक के रूप में मजबूत हैं। मायावती का पुराना रिश्ता ब्राह्मणों से भावनात्मक भी है, जैसे ब्रह्मदत्त द्विवेदी ने 1995 में उनकी जान बचाई। द्विवेदी ब्राह्मण थे और मायावती उन्हें भाई मानती थीं। उनकी मौत पर मायावती ने बहुत दुख जताया। आज ‘घूसखोर पंडित’ विवाद में मायावती का साथ देना उसी रिश्ते की याद दिलाता है। लेकिन सवाल है कि ब्राह्मण अब बसपा की तरफ आएंगे या नहीं? जानकार कहते हैं कि ब्राह्मण सम्मान चाहते हैं, और अगर भाजपा उन्हें संतुष्ट रखती है तो बदलाव मुश्किल है। फिर भी, मायावती की कोशिश दिखाती है कि राजनीति में पुराने रिश्ते नए मौके दे सकते हैं।

भविष्य की संभावनाएं और चुनौतियां

2027 के चुनाव में मायावती की सोशल इंजीनियरिंग काम करेगी या नहीं, यह बड़ा सवाल है। बसपा 2012 से सत्ता से बाहर है, लोकसभा में कोई सांसद नहीं, और विधानसभा में सिर्फ एक विधायक। दलित वोट बैंक भी अब भाजपा और समाजवादी पार्टी की तरफ जा रहा है। मायावती ब्राह्मणों और मुसलमानों को जोड़कर पुराना फॉर्मूला आजमा रही हैं, लेकिन हालात बदल चुके हैं। मुसलमान समाजवादी पार्टी से नाराज हैं क्योंकि अखिलेश यादव ने आजम खान जैसे नेताओं की अनदेखी की, लेकिन क्या वे बसपा आएंगे? ब्राह्मण भाजपा से खुश हैं, क्योंकि वहां उन्हें पद मिल रहे हैं। फिर भी, ‘घूसखोर पंडित’ जैसे विवादों से अगर ब्राह्मण नाराज हुए तो बसपा को फायदा हो सकता है। मायावती ने हाल में ब्राह्मण नेताओं को पार्टी में शामिल किया, जैसे राधेश्याम पांडे। लेकिन चुनौती यह है कि बसपा का आधार कमजोर है और मायावती चुनाव प्रचार से दूर रहती हैं। जानकार कहते हैं कि 2007 में सफलता इसलिए मिली क्योंकि तब विरोधी कमजोर थे, लेकिन आज भाजपा मजबूत है। मायावती को दलितों में फिर से विश्वास जगाना होगा और ब्राह्मणों को साबित करना होगा कि वे उनका सम्मान करेंगी। यह रणनीति बैलेंस्ड पर्सपेक्टिव से देखें तो सोचने वाली है—क्या जाति आधारित राजनीति आज भी काम करती है या लोग विकास पर वोट देंगे? मायावती की कोशिश अच्छी है, लेकिन सफलता पर सवाल हैं। कुल मिलाकर, यह विवाद और रणनीति यूपी की राजनीति को रोचक बना रही है।

राष्ट्र को एक सूत्र में बांधते हैं हम
भारत श्री

दुनिया का सबसे बड़ा खुलासा

एपस्टीन फाइल्स और सत्ता के अंधेरे कमरे

@ रिंकू विश्वकर्मा

30 जनवरी की रात दुनिया एक ऐसे सच से रूबरू हुई जिसने सत्ता, बुद्धिमत्ता और सभ्यता के पूरे ढांचे को हिला दिया। अमेरिकी डिपार्टमेंट ऑफ जस्टिस ने जेफ्री एपस्टीन से जुड़े लगभग 30 लाख पन्नों के गोपनीय दस्तावेज सार्वजनिक कर दिए। इन फाइलों में ऐसे नाम छिपे थे, जिन पर दुनिया भरोसा करती रही — जिनके हाथों में नीतियाँ थीं, युद्धों का फैसला था, अर्थव्यवस्थाओं की दिशा थी और विज्ञान का भविष्य था।लेकिन इन दस्तावेजों ने एक भयावह तस्वीर पेश की—एक ऐसा नेटवर्क जहाँ मानव शरीर, खासकर नाबालिग लड़कियाँ, सत्ता के खेल की महज़ टूल बनाकर इस्तेमाल की जाती थीं। और इस नेटवर्क का हिस्सा वे लोग भी थे, जिनका नाम समय की किताबों में स्वर्णाक्षरों से लिखा गया है।

पत्थर की तरह भारी नाम

एपस्टीन फाइल्स के खुलते ही दुनिया को पहला झटका तब लगा जब दस्तावेजों में डोनाल्ड ट्रंप का नाम 38,000 बार और व्लादिमिर पुतिन का नाम 1,005 बार दर्ज पाया गया। यह कोई साधारण बात नहीं थी। यह संकेत था कि नेटवर्क की जड़ें कितनी गहरी और कितनी दूर तक फैली हुई थीं।

अमेरिका हो, ब्रिटेन हो, फ्रांस या नॉर्वे—इन देशों में दस्तावेज़ सामने आते ही इस्तीफों की झड़ी लग गई।यूरोप के कई देशों में तो ऐसा माहौल बन गया मानो राजनीतिक ढांचा ही ढह रहा हो।एपस्टीन नेटवर्क की असलियत सामने आते ही यह साफ हो गया कि यह अपराध सिर्फ एक व्यक्ति का नहीं था, बल्कि सत्ता के ऊपरी गलियारों में फैले उस अंधेरे का हिस्सा था, जिसका आम जनता को कभी अंदाजा नहीं होता।

बुद्धि, प्रतिभा और अंधेरा

सबसे चौंकाने वाली बात यह है कि यह नेटवर्क केवल राजनेताओं या अरबपतियों तक सीमित नहीं था।इसमें दुनिया के कुछ महान वैज्ञानिक और विचारक भी शामिल पाए गए—वे लोग जो मानव सभ्यता को आगे बढ़ाने के प्रतीक माने जाते हैं।उदाहरण के तौर पर, स्टीफन हॉकिंग, जिन्हें आइंस्टीन के बाद सबसे बड़े भौतिक वैज्ञानिक के रूप में माना जाता है, उन पर आरोप है कि उन्हें मासूम बच्चियों को 'नाचते हुए देखना' अच्छा लगता था। यह आरोप दुनिया के लिए किसी सदमे से कम नहीं था।क्योंकि हॉकिंग सिर्फ एक वैज्ञानिक नहीं थे—वह मानव बुद्धि का चेहरा थे।ब्लैक होल थर्मोडायनामिक्स, कॉस्मोलॉजी, टाइम ट्रैवल, और हॉकिंग रेडिएशन जैसी खोजों ने दुनिया को समय और ब्रह्मांड को देखने का नजरिया बदल दिया।जब ऐसे नाम आरोपों के दायरे में आए, तो सवाल अपराध से कहीं बड़े हो गए।सवाल यह था कि क्या ज्ञान और नैतिकता दो अलग-अलग रास्ते हैं? और अगर दुनिया को चलाने वाले सबसे पढ़े-लिखे, सबसे ताक़तवर और सबसे प्रभावशाली लोग ही नैतिक पतन के गड्ढे में गिर जाएँ, तो सभ्यता की दिशा कौन तय करेगा?

सत्ता का असली चेहरा

एपस्टीन प्रकरण ने दिखा दिया कि दुनिया की सत्ता संरचना कितनी खोखली है।लोग यह मानकर चलते हैं कि सत्ता में बैठे लोग कानून, इंसाफ़ और नैतिकता के संरक्षक हैं।लेकिन जब वही लोग, जिनके हाथों में—युद्ध का फ़ैसला, अर्थव्यवस्था की दिशा, सामाजिक ढाँचे का निर्माण, और दुनिया की सुरक्षा का पूरा भार है, वही लोग अपराध की जड़ बन जाएँ, तो लोकतंत्र के आदर्शों की नींव हिल जाती है।एपस्टीन नेटवर्क में लड़कियों को सिर्फ मानव नहीं समझा गया, बल्कि एक सत्ता के उपकरण की तरह उपयोग किया गया।यह घटना केवल अपराध नहीं है।यह इंसानियत के ख़िलाफ़ अपराध है।

राजनीति और कूटनीति में तूफ़ान

फाइल्स सार्वजनिक होने के बाद कई मंत्री वरिष्ठ अधिकारी खुफिया एजेंसी से जुड़े लोग और राजनयिक ने तुरंत इस्तीफे दे दिए।कई देशों में संवैधानिक संकट जैसे हालात बन गए।कूटनीतिक संबंधों में तनाव आया और अंतरराष्ट्रीय मंचों पर जवाबदेही की मांग उठने लगी।यूरोप में तो इसे एपस्टीन इफेक्ट कहा जाने लगा—एक ऐसी लहर जिसने सत्ता के गलियारों को साफ़ झकझोर दिया।

सिर्फ एपस्टीन नहीं — सवाल पूरे सिस्टम से है

आज सवाल यह नहीं कि जेफ्री एपस्टीन कौन था।सवाल यह है कि एपस्टीन जैसा नेटवर्क चल कैसे पाया?क्यों दुनिया की सबसे शक्तिशाली संस्थाएँ ऐसे अपराध को दशकों तक दबाती रहीं?क्यों ऐसा नेटवर्क बिना किसी डर के चलता रहा?

और सबसे बड़ा सवाल अगर दुनिया के सबसे ताक़तवर लोग, जिनके हाथ में कानून है, वही कानून तोड़ें—तो आम इंसान का क्या होगा?एपस्टीन नाम नहीं, बल्कि एक आइना है।वह आइना जिसमें सत्ता की खूबसूरत इमारतों के पीछे का अंधेरा साफ़ दिखाई देता है।

क्या यह सभ्यता के नैतिक पतन का संकेत है?

आज का सबसे बड़ा संकट किसी देश का नहीं—मानवता का है।एपस्टीन फाइल्स ने हमें यह सोचने पर मजबूर कर दिया है कि क्या बुद्धिमत्ता नैतिकता की गारंटी है?क्या सत्ता इंसान को गैर-मानवीय बना देती है?क्या आधुनिक सभ्यता वास्तव में उतनी सभ्य है, जितना हम सोचते हैं?

और क्या सिस्टम इतना भ्रष्ट हो चुका है कि उसे ठीक करना अब असंभव है?

दुनिया जिस पर भरोसा करती रही, वही दुनिया जब अपराधी की तरह सामने आए, तो यह सिर्फ राजनीतिक संकट नहीं, बल्कि नैतिक संकट है।

सच्चाई जितनी कड़वी, उतनी ज़रूरी

एपस्टीन फाइल्स ने एक असुविधाजनक लेकिन ज़रूरी सत्य उजागर किया है।सत्ता का हर चेहरा चमकदार नहीं होता — कई बार उसके पीछे अंधेरा होता है।वो अंधेरा जिस पर रोशनी डालने की हिम्मत दुनिया देर से दिखा रही है, लेकिन दिखा रही है—यही उम्मीद की किरण है।

अब दुनिया को क्या करना होगा?

सत्ता में बैठे हर व्यक्ति की पारदर्शिता सुनिश्चित करनी होगी।नेटवर्क-आधारित अपराधों पर वैश्विक निगरानी तंत्र बनाना पड़ेगा।प्रभावशाली लोगों के लिए भी समान कानून—बिना किसी छूट—लागू करना होगा।नैतिक शिक्षा और संवेदनशीलता को नेतृत्व का अनिवार्य हिस्सा बनाना होगा।

क्योंकि अगर ऊपर की मंज़िलें सड़ चुकी हों, तो पूरी इमारत गिरने में देर नहीं लगती।इंसानियत की असली परीक्षा अब शुरू हुई हैएपस्टीन फाइल्स ने दुनिया को झकझोर कर रख दिया है, लेकिन यह एक चेतावनी भी है।चेतावनी कि सभ्यता तभी सुरक्षित है जब सत्ता में बैठे लोग इंसान बने रहें।वरना ताक़त, बुद्धि और प्रभाव—सब मिलकर दुनिया को अंधेरे में धकेल सकते हैं।आज सवाल एपस्टीन का नहीं है।सवाल यह है कि क्या सत्ता में बैठे लोग कानून से ऊपर हैं?और अगर हाँ, तो आम नागरिक की सुरक्षा, न्याय और भविष्य का क्या होगा?इन सवालों का जवाब दुनिया को अभी देना है क्योंकि यही इतिहास की दिशा तय करेगा।

पाकिस्तान से अलग होने का सपना, आकार, जनसंख्या और सीमाओं की हकीकत

बलूचिस्तान की कहानी: एक बड़ा इलाका, लेकिन परेशानियां भरी जिंदगी

बलूचिस्तान पाकिस्तान का सबसे बड़ा प्रांत है, जो देश के दक्षिण-पश्चिम हिस्से में फैला हुआ है। यह इलाका सालों से अलगाववाद की आग में जल रहा है, जहां स्थानीय लोग खुद को पाकिस्तान से अलग मानते हैं। हाल के सालों में, खासकर 2026 में, यहां हिंसा बढ़ गई है। जनवरी के आखिर में बलूचिस्तान लिबरेशन आर्मी (बीएलए) ने कई शहरों में हमले किए, जिसमें 31 आम लोग और 17 सुरक्षाकर्मी मारे गए। पाकिस्तानी फौज ने जवाब में 216 उग्रवादियों को मार गिराया। यह संघर्ष 1948 से चल रहा है, जब बलूचिस्तान पाकिस्तान में शामिल हुआ था। स्थानीय लोग कहते हैं कि केंद्र सरकार उनके संसाधनों का फायदा उठाती है, लेकिन विकास नहीं करती। पाकिस्तान सरकार इसे आतंकवाद मानती है और विदेशी ताकतों, जैसे भारत, पर आरोप लगाती है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कोई देश बलूचिस्तान की आजादी का समर्थन नहीं करता। एक सर्वे में सिर्फ 37% बलूच लोग आजादी चाहते हैं, जबकि ज्यादातर ज्यादा स्वायत्तता मांगते हैं। इलाके की गरीबी, बेरोजगारी और मानवाधिकार उल्लंघन की शिकायतें आम हैं। चीन यहां ग्वादर बंदरगाह पर निवेश कर रहा है, लेकिन उग्रवादी इसे विदेशी शोषण मानते हैं। पाकिस्तान की फौज लगातार ऑपरेशन चला रही है, लेकिन समस्या खत्म नहीं हो रही। यह संघर्ष क्षेत्र की स्थिरता को खतरे में डाल रहा है, और पड़ोसी देश जैसे ईरान और अफगानिस्तान भी प्रभावित हो रहे हैं। क्या यह इलाका कभी शांत होगा? यह सवाल सबके मन में है, क्योंकि हिंसा से आम लोगों का जीवन मुश्किल हो गया है। विशेषज्ञ कहते हैं कि बातचीत से ही समाधान निकलेगा, न कि बंदूक से। लेकिन दोनों तरफ से विश्वास की कमी है।

आकार की बात: पाकिस्तान का आधा हिस्सा, लेकिन खाली-खाली सा

बलूचिस्तान पाकिस्तान का सबसे बड़ा प्रांत है, जो करीब 347,190 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। यह पूरे पाकिस्तान के 44% क्षेत्र को कवर करता है, यानी इतना बड़ा कि कई भारतीय राज्यों को मिलाकर भी छोटा पड़े। लेकिन यहां की ज्यादातर जमीन रेगिस्तानी और पहाड़ी है, जहां जीवन मुश्किल है। उत्तर में सुलैमान और तोबा काकर पर्वत श्रृंखलाएं हैं, जबकि पश्चिम में मकरान, खरान और चगाई रेगिस्तान फैले हैं। दक्षिण में अरब सागर की 770 किलोमीटर लंबी तट रेखा है, जो रणनीतिक महत्व रखती है। यहां ग्वादर जैसे बंदरगाह हैं, जहां चीन बड़े प्रोजेक्ट चला रहा है। इलाके का मौसम बहुत गर्म और ठंडा होता है, बारिश कम पड़ती है, सिर्फ 200-350 मिलीमीटर सालाना। इस वजह से कृषि मुश्किल है, और लोग पशुपालन या खनन पर निर्भर हैं। प्रांत में चार मुख्य भौगोलिक हिस्से हैं: ऊपरी उच्चभूमि, निचली उच्चभूमि, तटीय मैदान और रेगिस्तान। ये इलाके ज्यादातर खाली हैं, क्योंकि जनसंख्या घनत्व सिर्फ 43 लोग प्रति वर्ग किलोमीटर है। पाकिस्तान सरकार यहां विकास के दावे करती है, लेकिन स्थानीय लोग कहते हैं कि संसाधन जैसे गैस और खनिज बाहर जाते हैं, फायदा नहीं मिलता। यह बड़ा आकार अलगाववाद को बढ़ावा देता है, क्योंकि नियंत्रण मुश्किल है। फौज यहां बड़े ऑपरेशन चलाती है, लेकिन भूगोल की वजह से उग्रवादी छिप जाते हैं। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, यह इलाका अफगानिस्तान और ईरान से लगता है, इसलिए सुरक्षा चिंताएं बढ़ती हैं। विशेषज्ञ मानते हैं कि इतने बड़े क्षेत्र में शांति लाना आसान नहीं, लेकिन आर्थिक विकास से बदलाव आ सकता है। फिर भी, संघर्ष जारी है, और आकार की वजह से समस्या और जटिल हो जाती है। क्या इतना बड़ा इलाका पाकिस्तान से अलग हो सकता है? यह सवाल विचार करने लायक है।

जनसंख्या की हकीकत: कम लोग, लेकिन विविध संस्कृति और परेशानियां

बलूचिस्तान की जनसंख्या करीब 14.9 मिलियन है, जो पाकिस्तान की कुल आबादी का सिर्फ 6% है। यह सबसे कम आबादी वाला प्रांत है, लेकिन विविधता से भरा। यहां 52% बलूच, 36% पश्तून और बाकी ब्राहुई, हजारा, सिंधी जैसे समुदाय हैं। क्वेटा, प्रांत की राजधानी, सबसे बड़ा शहर है जहां 1.6 मिलियन लोग रहते हैं। अन्य शहर जैसे तुरबत और खदार छोटे हैं। इलाके में गरीबी ज्यादा है, बेरोजगारी ऊंची, और शिक्षा-स्वास्थ्य सुविधाएं कम। अफगान शरणार्थी भी यहां 7 लाख से ज्यादा हैं, जो समस्या बढ़ाते हैं। स्थानीय लोग कहते हैं कि केंद्र सरकार पंजाबी हित देखती है, बलूचों को नजरअंदाज करती है। इस वजह से अलगाववाद बढ़ा है। 2026 में हुए हमलों में आम लोग मारे गए, जो दिखाता है कि हिंसा कैसे जीवन प्रभावित करती है। सर्वे बताते हैं कि 67% लोग ज्यादा प्रांतीय स्वायत्तता चाहते हैं, लेकिन आजादी के पक्ष में कम हैं। संस्कृति में बलूची, ब्राहुई, पश्तो और सिंधी भाषाएं बोली जाती हैं। लोग ज्यादातर खानाबदोश हैं, पशुपालन करते हैं। लेकिन खनिज संसाधनों की वजह से विदेशी रुचि है, जैसे चीन का सीपीईसी प्रोजेक्ट। पाकिस्तान सरकार विकास के लिए फंड देती है, लेकिन भ्रष्टाचार की शिकायतें हैं। अंतरराष्ट्रीय संगठन मानवाधिकार उल्लंघन की बात करते हैं, जैसे गायब करना और हत्याएं। यह जनसंख्या की छोटी संख्या अलगाव को आसान बनाती है, लेकिन फौजी ताकत रोकती है। विशेषज्ञ कहते हैं कि अगर बातचीत हो, तो समस्या सुलझ सकती है। लेकिन दोनों पक्षों में अविश्वास है। जनसंख्या की विविधता एक ताकत है, लेकिन संघर्ष में बंटवारा पैदा करती है। क्या कम लोग बड़े बदलाव ला सकते हैं? यह समय बताएगा।

सीमाओं की कहानी: पड़ोसी देशों से घिरा, रणनीतिक महत्व वाला इलाका

बलूचिस्तान की सीमाएं इसे खास बनाती हैं। पश्चिम में ईरान से लगती है, उत्तर में अफगानिस्तान, उत्तर-पूर्व में खैबर पख्तूनख्वा और पंजाब, दक्षिण-पूर्व में सिंध, और दक्षिण में अरब सागर। यह दुर्गम लाइन अफगानिस्तान के साथ 900 किलोमीटर लंबी है, जहां से उग्रवादी आ-जा सकते हैं। ईरान के साथ सीमा पर सिस्तान-बलूचिस्तान प्रांत है, जहां बलूच लोग दोनों तरफ रहते हैं। कुछ राष्ट्रवादी बड़ा बलूचिस्तान चाहते हैं, जिसमें ईरान और अफगानिस्तान के हिस्से शामिल हों। लेकिन कोई देश इसे मान्यता नहीं देता। दक्षिण की तट रेखा ग्वादर बंदरगाह की वजह से महत्वपूर्ण है, जहां चीन अरबों डॉलर लगा रहा है। यह सीपीईसी का हिस्सा है, जो पाकिस्तान को आर्थिक फायदा दे सकता है। लेकिन उग्रवादी इसे हमला करते हैं, क्योंकि उन्हें लगता है कि फायदा स्थानीय को नहीं मिलेगा। पाकिस्तान सरकार सीमाओं पर सुरक्षा बढ़ा रही है, लेकिन भूगोल मुश्किल है। रेगिस्तान और पहाड़ छिपने की जगह देते हैं। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, अमेरिका और चीन की रुचि है। चीन हमलों की निंदा करता है और पाकिस्तान का समर्थन करता है। अमेरिका इसे आंतरिक मामला मानता है। ईरान भी अपने बलूच इलाके में उग्रवाद से परेशान है। यह सीमाएं व्यापार और सुरक्षा के लिए महत्वपूर्ण हैं, लेकिन संघर्ष बढ़ाती हैं। 2026 के हमलों ने दिखाया कि सीमाएं कितनी कमजोर हैं। विशेषज्ञ कहते हैं कि अगर सीमा प्रबंधन बेहतर हो, तो समस्या कम हो सकती है। लेकिन राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी है। सीमाओं की वजह से बलूचिस्तान वैश्विक ध्यान में है, लेकिन अलगाव की संभावना कम लगती है। क्या ये सीमाएं बदल सकती हैं? यह विचार करने योग्य है।

अलग होने की संभावना: सपना या हकीकत, दोनों पक्षों की बात

बलूचिस्तान के अलग होने का सवाल सालों से उठता है, लेकिन हकीकत में मुश्किल लगता है। बीएलए जैसे समूह आजादी चाहते हैं और हमले करते हैं, जैसे 2026 में ऑपरेशन हेरोफ-2 में कई शहरों पर कब्जा करने की कोशिश। पाकिस्तान फौज ने कड़ा जवाब दिया, 216 उग्रवादियों को मारकर। सरकार इसे आतंकवाद कहती है और बातचीत से इनकार करती है। रक्षा मंत्री ने कहा कि फौज इलाके की भौगोलिक चुनौतियों से जूझ रही है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कोई समर्थन नहीं है; न संयुक्त राष्ट्र, न कोई देश आजादी मानता है। चीन पाकिस्तान का साथ देता है, क्योंकि उसके निवेश खतरे में हैं। विशेषज्ञ कहते हैं कि अलगाव के लिए अंतरराष्ट्रीय मान्यता जरूरी है, जो नहीं मिलेगी। सर्वे में सिर्फ 37% बलूच आजादी चाहते हैं, ज्यादातर स्वायत्तता। पाकिस्तान आरोप लगाता है कि भारत उग्रवादियों को मदद करता है, लेकिन सबूत नहीं। बलूच नेता संयुक्त राष्ट्र से शांति सेना मांगते हैं, लेकिन कोई सुनवाई नहीं। इतिहास में 1948 से पांच विद्रोह हुए, लेकिन सब दब गए। आर्थिक रूप से, बलूचिस्तान गैस और खनिजों से अमीर है, लेकिन गरीब। अलग होने पर जीवित रहना मुश्किल होगा। कुछ विश्लेषक कहते हैं कि लंबे संघर्ष से पाकिस्तान ज्यादा स्वायत्तता दे सकता है। लेकिन फौजी दबाव जारी है, मानवाधिकार उल्लंघन की शिकायतें हैं। दोनों पक्षों की बात सुनें तो, बलूच लोग शोषण से तंग हैं, जबकि पाकिस्तान एकता चाहता है। समाधान बातचीत में है, लेकिन अविश्वास बड़ा है। क्या अलगाव होगा? शायद नहीं, लेकिन संघर्ष जारी रहेगा। यह स्थिति क्षेत्र की शांति को प्रभावित करती है।

राष्ट्र को एक सूत्र में बांधते हैं हम
भारत श्री

जागो मन के सजग पथिक ओ !

मेरे मन के आसमान में पंख पसारे
उड़ते रहते अथक पखेरू प्यारे-प्यारे!

मन का मरु मैदान तान से गूँज उठा
थकी पड़ी सोई-सूनी नदियाँ जागीं

तृण-तरु फिर लह-लह पल्लव दल झूम रहा
गुन-गुन स्वर में गाता आया अलि अनुरागी

यह कौन मीत अगणित अनुनय से
निस दिन किसका नाम उचारे!

हौले-हौले दखिन पवन नित
डोले-डोले द्वारे-द्वारे!

बकुल-शिरिष-कचनार आज है आकुल
माधुरी-मंजरी मंद-मधुर मुस्काई

क्रिश्नझड़ा की फुनगी पर अब रही सुलग
सेमल वन की लहकी-लहकी प्यासी आगी

जागो मन के सजग पथिक ओ!
अलस-थकन के हारे-मारे

कबसे तुम्हें पुकार रहे हैं
गीत तुम्हारे इतने सारे!

मुझे तुम मिले !

मुझे तुम मिले!
मृतक-प्राण में शक्ति-संचार कर;

निरंतर रहे पूज्य, चैतन्य भर!
पराधीनता—पाप-पंकिल धुले!

मुझे तुम मिले!
रहा सूर्य स्वातंत्र्य का हो उदय!

हुआ कर्मपथ पूर्ण आलोकमय!
युगों के घुले आज बंधन खुले!

मुझे तुम मिले!

फणीश्वरनाथ रेणु

समादृत कथाकार। कुछ कविताएँ भी लिखीं। समाजवादी और आंचलिक संवेदना के लिए उल्लेखनीय। पद्मश्री से सम्मानित।

विदेश में तलाक की कार्यवाही पर भारतीय अदालतों की लगाम?

सुप्रीम कोर्ट में याचिका ने फिर उठाया पुराना सवाल

याचिका की शुरुआत: क्या है पूरा मामला?

हाल ही में एक महिला ने सुप्रीम कोर्ट में एक याचिका दाखिल की है, जिसमें उन्होंने अपने पति द्वारा अमेरिका के रोड आइलैंड में शुरू की गई तलाक की कार्यवाही को रोकने की मांग की है। यह शादी भारतीय ईसाई रीति से तमिलनाडु में हुई थी और तमिलनाडु मैरिज रजिस्ट्रेशन एक्ट, 2009 के तहत रजिस्टर्ड है। महिला का कहना है कि वह भारत में रहती है और शादी भारतीय डिवोर्स एक्ट, 1869 के तहत आती है। पति ने अक्टूबर 2025 में अमेरिकी अदालत में तलाक के लिए अर्जी दी, लेकिन महिला ने उस अदालत की अधिकारिता को स्वीकार नहीं किया। वह कहती हैं कि यह कार्यवाही सीमा पार शादी के दुरुपयोग, अदालत चुनने की गलत प्रथा और भारतीय महिला के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है। उन्होंने इसे जबरदस्ती, आर्थिक शोषण और दबाव का हथियार बताया है। महिला का तर्क है कि मामला भारत में जारी है और विदेशी अदालत के पास कोई अधिकार नहीं है, क्योंकि यह भारतीय कानून को हराने की कोशिश है। यह याचिका अनुच्छेद 32 के तहत दाखिल की गई है, जो मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए है। ऐसे मामले अक्सर एनआरआई जोड़ों में आते हैं, जहां एक पक्ष विदेश में तेज तलाक लेना चाहता है, जबकि दूसरा भारत में न्याय मांगता है। सुप्रीम कोर्ट अब इस पर विचार करेगा कि क्या भारतीय अदालतें विदेशी कार्यवाही में दखल दे सकती हैं। यह सवाल बार-बार उठता है, क्योंकि वैश्विक के साथ शादियां सीमाओं के पार हो रही हैं, लेकिन कानून अभी भी जटिल हैं। महिला का दावा है कि अगर यह जारी रहा तो उसके अनुच्छेद 14 और 21 के अधिकारों का हनन होगा, जो समानता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता से जुड़े हैं। इस याचिका ने फिर से बहस छेड़ दी है कि भारतीय अदालतें कितनी दूर तक जा सकती हैं। इस तरह के मामले दिखाते हैं कि कानूनी लड़ाई दो देशों के बीच फंस जाती है, जहां एक पक्ष को फायदा मिलता है और दूसरा नुकसान उठाता है। कुल मिलाकर, यह याचिका एक बड़ा मुद्दा उठाती है जो कई परिवारों को प्रभावित कर सकती है।

कानूनी आधार: पुराने फैसले क्या कहते हैं?

भारतीय कानून में विदेशी तलाक के फैसलों को मान्यता देने के नियम साफ हैं, लेकिन जटिल भी। सुप्रीम कोर्ट ने 1991 में वाई नरसिम्हा राव बनाम वाई वेंकटा लक्ष्मी मामले में कहा था कि वैवाहिक विवादों को पार्टियों के व्यक्तिगत कानून और निवास के आधार पर सक्षम अदालतों द्वारा ही सुलझाया जाना चाहिए। अगर विदेशी अदालत भारतीय कानून का उल्लंघन करती है या अधिकारिता के बिना फैसला देती है, तो वह भारत में बाध्यकारी नहीं होगा। सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 13 कहती है कि विदेशी फैसला तब मान्य नहीं अगर वह धोखे से लिया गया हो या भारतीय कानून के खिलाफ हो। धारा 14 में अदालत अधिकारिता मान सकती है जब तक विपरीत साबित न हो। धारा 44A में पारस्परिक देशों के फैसलों को लागू करने की बात है, लेकिन धारा 13 के नियमों के साथ। ईसाई शादियों के लिए इंडियन डिवोर्स एक्ट, 1869 की धारा 88 कहती है कि कोई भी शादी जो व्यक्तिगत कानून के खिलाफ हो, वैध नहीं मानी जाएगी। इसका मतलब है कि शादी की वैधता और तलाक दोनों भारतीय कानून पर निर्भर हैं। सुप्रीम कोर्ट ने मोदी एंटरटेनमेंट नेटवर्क बनाम डब्ल्यूएसजी क्रिकेट मामले में एंटी-सूट इंजंक्शन के नियम बताए, जिसमें कहा गया कि ऐसी रोक लगाने का फैसला सावधानी से लिया जाना चाहिए। अदालत को देखना होता है कि क्या विदेशी कार्यवाही उत्पीड़क है और क्या न्याय के हित में रोक जरूरी है। विवेक राय गुप्ता बनाम नियति गुप्ता में सुप्रीम कोर्ट ने विदेशी फैसले को भारत में लागू करने से रोका क्योंकि वह अदालत के आदेश की अवहेलना थी। ये फैसले दिखाते हैं कि भारतीय अदालतें अपने नागरिकों की रक्षा कर सकती हैं, लेकिन विदेशी अदालतों का सम्मान भी रखती हैं। कलकत्ता हाईकोर्ट ने हाल ही में कहा कि अगर एक पक्ष विदेश में रहता है, तो विदेशी अदालत सुनवाई कर सकती है। लेकिन अगर दोनों पक्ष भारत से जुड़े हैं, तो बात अलग है। कुल मिलाकर, ये पुराने फैसले वर्तमान याचिका के लिए आधार हैं, लेकिन हर मामला अपनी परिस्थितियों पर निर्भर करता है। यह सोचने पर मजबूर करता है कि वैश्विक दुनिया में कानून कैसे सामंजस्य बिठाएं।

महिला की दलीलें: अमेरिकी अदालत क्यों गलत?

महिला की याचिका में मुख्य तर्क है कि अमेरिकी अदालत के पास इस मामले की सुनवाई का कोई अधिकार नहीं है, क्योंकि शादी भारतीय कानून के तहत हुई और वह भारत में रहती है। वह कहती हैं कि पति ने बिना उनकी सहमति के कार्यवाही शुरू की, जो उनके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है। उन्होंने इसे उत्पीड़क और असंवैधानिक बताया, जिसमें आर्थिक दबाव और जबरदस्ती शामिल है। महिला का दावा है कि विदेशी अदालत भारतीय कानून को हराने की कोशिश कर रही है, क्योंकि तलाक के आधार भारतीय डिवोर्स एक्ट से मेल नहीं खाते। वह 1991 के सुप्रीम कोर्ट फैसले पर भरोसा कर रही हैं, जो कहता है कि विदेशी फैसला तभी मान्य जब दोनों पक्ष स्वेच्छा से उस अदालत को मानें और वह व्यक्तिगत कानून के अनुसार हो। यहां न तो सहमति है और न ही अधिकारिता। महिला कहती हैं कि अगर यह जारी रहा तो वह विदेशी अदालत में फंस जाएंगी, जहां उनके पास कोई प्रभावी उपाय नहीं है। यह याचिका एनआरआई शादियों में महिलाओं की आम समस्या को उजागर करती है, जहां पति विदेश में आसान तलाक लेते हैं और पत्नी भारत में अकेली रह जाती है। वह मांग कर रही हैं कि सुप्रीम कोर्ट अमेरिकी कार्यवाही पर रोक लगाए और घोषित करे कि कोई भी फैसला भारत में अमान्य होगा। उनके अनुसार, यह अनुच्छेद 14 की समानता और अनुच्छेद 21 की व्यक्तिगत स्वतंत्रता का हनन है। कुछ टिप्पणियां कहती हैं कि अगर दोनों अमेरिका में रहे हैं, तो अमेरिकी अदालत का अधिकार बनता है, लेकिन महिला का कहना है कि वह भारत में है। यह दलीलें सोचने पर मजबूर करती हैं कि क्या कानून महिलाओं की रक्षा के लिए पर्याप्त है या नहीं। कुल में, यह मामला दिखाता है कि सीमा पार विवादों में एक पक्ष की कमजोरी दूसरे की ताकत बन जाती है।

अदालतों की शक्ति: रोक कैसे लग सकती है?

भारतीय अदालतें विदेशी कार्यवाही को सीधे रोक नहीं सकतीं, क्योंकि उनकी अधिकारिता भारत तक सीमित है, लेकिन वे पक्षकारों पर व्यक्तिगत आदेश दे सकती हैं। सुप्रीम कोर्ट एंटी-सूट इंजंक्शन जारी कर सकता है अगर कार्यवाही उत्पीड़क या न्याय के खिलाफ हो। यह इंजंक्शन पक्षकार को विदेशी अदालत में जाने से रोकता है, लेकिन विदेशी अदालत पर असर नहीं डालता। अदालतें कॉमिटी के सिद्धांत का सम्मान करती हैं, जो देशों की अदालतों के बीच आपसी सम्मान है, लेकिन अगर विदेशी कार्यवाही दबाव वाली हो तो दखल देती हैं। विवेक राय गुप्ता मामले में सुप्रीम कोर्ट ने विदेशी फैसले को भारत में लागू होने से रोका क्योंकि वह अदालत के आदेश की अवहेलना थी। अगर विदेशी फैसला भारतीय आदेश के बावजूद आता है, तो भारत में उसे अमान्य माना जा सकता है। सिविल प्रक्रिया संहिता की धाराएं यह सुनिश्चित करती हैं कि विदेशी फैसला भारतीय कानून से मेल खाए। कलकत्ता हाईकोर्ट ने कहा कि अगर एक पक्ष विदेश में रहता है, तो विदेशी अदालत सुन सकती है, लेकिन अगर शादी भारत में हुई और व्यक्तिगत कानून लागू है, तो बात अलग है। सुप्रीम कोर्ट अब तय करेगा कि क्या इस मामले में इंजंक्शन जरूरी है। यह शक्ति सावधानी से इस्तेमाल होती है, क्योंकि गलत इस्तेमाल से अंतरराष्ट्रीय संबंध प्रभावित हो सकते हैं। कुछ मामलों में, अगर दोनों पक्ष विदेश में रहते हैं, तो विदेशी फैसला मान्य हो सकता है। लेकिन अगर एक पक्ष भारत में है, तो अदालत रक्षा कर सकती है। यह स्थिति सोचने लायक है कि कानूनी शक्ति की सीमाएं क्या हैं और न्याय कैसे सुनिश्चित हो।

बड़े प्रभाव: एनआरआई जोड़ों के लिए सबक

यह याचिका एनआरआई शादियों में आने वाली समस्याओं को उजागर करती है, जहां तलाक के मामले दो देशों के कानूनों में फंस जाते हैं। कई बार एनआरआई पति विदेश में तलाक लेते हैं क्योंकि वहां प्रक्रिया तेज है, लेकिन पत्नी भारत में न्याय मांगती है। इससे महिलाओं को आर्थिक और भावनात्मक नुकसान होता है। राष्ट्रीय महिला आयोग ने सुझाव दिया है कि एनआरआई शादियां भारत में रजिस्टर्ड हों और विदेशी अदालतें उन्हें रद्द न कर सकें। लेकिन दूसरी तरफ, अगर जोड़ा विदेश में रहता है, तो विदेशी अदालत का अधिकार बनता है, जैसा कलकत्ता हाईकोर्ट ने कहा। यह संतुलित नजरिया जरूरी है, क्योंकि हर मामला अलग होता है। सुप्रीम कोर्ट का फैसला भविष्य के मामलों के लिए मिसाल बनेगा, जो कानूनों के बीच सामंजस्य की जरूरत बताएगा। हाल के परिवार कानून मामलों में सुप्रीम कोर्ट ने रखरखाव और हिरासत पर जोर दिया है, जैसे विधवा बहू को ससुर की संपत्ति से रखरखाव का अधिकार। यह दिखाता है कि अदालतें कमजोर पक्ष की रक्षा करती हैं। लेकिन चुनौतियां हैं, जैसे पासपोर्ट जब्त करना या विदेशी संपत्ति पर असर न डाल पाना। विशेषज्ञ कहते हैं कि अंतरराष्ट्रीय समझौते जरूरी हैं। यह मामला सोचने पर मजबूर करता है कि वैश्विक परिवारों के लिए कानून कैसे विकसित हों। कुल में, यह सबक है कि शादी से पहले कानूनी पहलू समझें।

राष्ट्र को एक सूत्र में बांधते हैं हम
भारत श्री

बाबा शब्द का बवाल

कोटद्वार से निकली बहस, क्या है इसकी असली वजह?

विवाद की शुरुआत: कोटद्वार में दुकान के नाम पर हंगामा

उत्तराखंड के पौड़ी जिले में बसे कोटद्वार शहर में हाल ही में एक छोटी सी दुकान के नाम ने बड़ा बवाल खड़ा कर दिया। बात जनवरी 2026 की है, जब एक मुस्लिम दुकानदार वकील अहमद की कपड़े की दुकान का नाम "बाबा स्कूल ड्रेस एंड मैचिंग सेंटर" देखकर कुछ हिंदू संगठनों के लोग नाराज हो गए। ये दुकान पिछले 42 साल से इसी नाम से चल रही है, लेकिन बजरंग दल से जुड़े कार्यकर्ताओं ने कहा कि "बाबा" शब्द सिर्फ हिंदू संतों और देवताओं के लिए है, और किसी दूसरे समुदाय के व्यक्ति को इसका इस्तेमाल नहीं करना चाहिए। उन्होंने दुकानदार से नाम बदलने की मांग की, जिससे वहां बहस शुरू हो गई और मामला हाथापाई तक पहुंच गया। पुलिस को बीच में आना पड़ा और स्थिति को काबू में किया। इसी बीच, लोकल जिम ओनर दीपक कुमार ने दुकानदार का साथ दिया। दीपक ने खुद को "मोहम्मद दीपक" कहकर विरोध जताया और कहा कि नाम से धर्म मत जोड़ो, ये इंसानियत की बात है। उनका ये वीडियो सोशल मीडिया पर वायरल हो गया, और कई लोग उनकी तारीफ करने लगे। दुकानदार वकील अहमद ने बताया कि उन्होंने नाम इसलिए रखा क्योंकि ये अच्छा लगता है, और यहां के सिद्धबली बाबा मंदिर की वजह से कई दुकानें "बाबा" नाम से हैं। पुलिस ने कहा कि मामला शांत करने के लिए दुकानदार नाम बदलने को तैयार हैं, लेकिन ये घटना ने पूरे देश में बहस छेड़ दी। क्या एक शब्द पर इतना विवाद सही है? ये सवाल अब हर तरफ पूछा जा रहा है, क्योंकि कोटद्वार जैसे शांत शहर में भी ऐसी बातें समाज को बांट सकती हैं। इस घटना से पता चलता है कि छोटी-छोटी बातें कैसे बड़ा रूप ले लेती हैं, और हमें सोचना चाहिए कि क्या नाम से धर्म तय होता है। कुल मिलाकर, ये विवाद सिर्फ एक दुकान का नहीं, बल्कि हमारी सोच का है।

"बाबा" शब्द का इतिहास: फारसी जड़ों से आज तक की यात्रा

"बाबा" शब्द सुनते ही दिमाग में बुजुर्ग या संत की तस्वीर आ जाती है, लेकिन इसका इतिहास बहुत पुराना और दिलचस्प है। भाषा विशेषज्ञों के मुताबिक, ये शब्द फारसी भाषा से आया है, जहां इसका मतलब होता है पिता, बुजुर्ग या सम्मानित व्यक्ति। बच्चों की पहली बोली में भी "बा-बा" जैसी आवाज आती है, जो दुनिया की कई भाषाओं में मिलती है, जैसे अंग्रेजी में "बेबी" या रूसी में "बाबुशका"। भारत में ये शब्द मुगलों के समय से आया, लेकिन यहां की संस्कृति में घुल-मिल गया। हिंदू परंपरा में "बाबा" संतों या योगियों के लिए इस्तेमाल होता है, जैसे बाबा रामदेव या नीम करोली बाबा। लेकिन ये सिर्फ हिंदू तक सीमित नहीं है। मुस्लिम और सूफी परंपराओं में भी ये आम है, जैसे बाबा फरीद या बाबा बुल्ले शाह, जो पाकिस्तान और भारत में पूजे जाते हैं। सिख धर्म में भी गुरु नानक को कभी-कभी "बाबा" कहा जाता है। डॉ. भीमराव आंबेडकर को भी लोग प्यार से "बाबा साहेब" कहते हैं, जो दिखाता है कि ये शब्द सम्मान और ज्ञान का प्रतीक है। कोटद्वार के विवाद में लोग कह रहे हैं कि "बाबा" हिंदू का है, लेकिन इतिहास बताता है कि ये किसी एक धर्म का नहीं, बल्कि सबका साझा है। फारसी से तुर्की और उर्दू तक, ये शब्द अपनापन और आदर दिखाता है। आज के समय में जब समाज बंट रहा है, ऐसे शब्द हमें जोड़ने का काम करते हैं। क्या हम इसे धर्म की दीवारों में बांधकर गलती कर रहे हैं? ये सोचने वाली बात है, क्योंकि भाषा तो सबकी है, और शब्दों का मतलब समय के साथ बदलता रहता है। कुल मिलाकर, "बाबा" की जड़ें गहरी हैं, और ये हमें याद दिलाता है कि संस्कृतियां आपस में जुड़ी हुई हैं।

देवालय से दरगाह तक: शब्द का उपयोग विभिन्न धर्मों में

"बाबा" शब्द देवालयों से लेकर दरगाहों तक हर जगह इस्तेमाल होता है, जो दिखाता है कि ये किसी एक धर्म की संपत्ति नहीं है। हिंदू धर्म में ये संतों और लोक देवताओं के लिए आम है, जैसे उत्तराखंड के सिद्धबली बाबा मंदिर, जहां हनुमान जी को "बाबा" कहकर पूजा जाता है। लोग वहां दर्शन करने जाते हैं और मानते हैं कि "बाबा" हर समस्या का हल करते हैं। इसी तरह, योगी आदित्यनाथ को भी लोग "बाबा" कहते हैं, क्योंकि वो नाथ परंपरा से हैं। लेकिन मुस्लिम परंपरा में भी ये शब्द बहुत पुराना है। सूफी संतों को "बाबा" या "पीर बाबा" कहा जाता है, जैसे दिल्ली की हजरत निजामुद्दीन दरगाह या अजमेर शरीफ, जहां "बाबा" शब्द सम्मान का प्रतीक है। पाकिस्तान में बाबा फरीद की दरगाह पर लाखों लोग जाते हैं। सिखों में गुरु ग्रंथ साहिब में भी "बाबा" का जिक्र है। यहां तक कि दलित समुदाय में डॉ. आंबेडकर को "बाबा साहेब" कहते हैं, जो सामाजिक न्याय का प्रतीक है। कोटद्वार के विवाद में लोग कहते हैं कि मुस्लिम दुकानदार "बाबा" नाम नहीं रख सकता, लेकिन दुकानदार ने कहा कि नाम अच्छा लगा तो रख लिया, और आंबेडकर जी को भी "बाबा" कहते थे। ये दिखाता है कि शब्द धर्म की सीमाओं से ऊपर है। क्या हम इसे सिर्फ हिंदू या मुस्लिम कहकर सीमित कर दें? नहीं, क्योंकि भारत जैसे देश में संस्कृतियां मिली-जुली हैं। सूफी और भक्ति आंदोलन में "बाबा" ने लोगों को जोड़ा है, न कि बांटा। आज जब विवाद होता है, तो हमें याद रखना चाहिए कि "बाबा" अपनापन का शब्द है, जो देवालय से दरगाह तक सबको जोड़ता है। ये बहस हमें सोचने पर मजबूर करती है कि क्या छोटे विवादों से हम अपनी एकता खो रहे हैं। कुल मिलाकर, "बाबा" का उपयोग हमें सिखाता है कि सम्मान हर धर्म में एक जैसा है।

समाज की प्रतिक्रिया: बहस से निकले सबक और आगे की राह

कोटद्वार के इस विवाद ने सोशल मीडिया से लेकर सड़क तक बहस छेड़ दी, और लोग दो हिस्सों में बंट गए। कुछ लोग कहते हैं कि "बाबा" हिंदू संस्कृति का हिस्सा है, और दूसरे समुदाय को इसका इस्तेमाल नहीं करना चाहिए, क्योंकि इससे धार्मिक भावनाएं आहत होती हैं। लेकिन ज्यादातर लोग दीपक कुमार की तरह सोचते हैं कि नाम से धर्म मत जोड़ो, ये इंसानियत की बात है। सोशल मीडिया पर BabaControversy ट्रेंड कर रहा है, जहां यूजर्स कह रहे हैं कि "धर्म पर लड़ाओ, जनता चूरन चाट लेगी"। बनारस जैसे शहरों में लोगों ने कहा कि "बाबा" आदर का शब्द है, किसी एक धर्म का नहीं। राजनीतिक नेता भी कूद पड़े, जैसे राहुल गांधी ने ट्वीट कर एकता की बात की। टीवी चैनलों पर डिबेट हुईं, जहां इतिहासकारों ने बताया कि "बाबा" फारसी से आया और सबके लिए है। इस विवाद से पुलिस को सतर्क रहना पड़ा, और दुकानदार ने नाम बदलने की बात मान ली, लेकिन सवाल ये है कि क्या ऐसे विवादों से समाज मजबूत होता है? नहीं, ये हमें कमजोर करते हैं। दीपक कुमार की कहानी ने दिखाया कि एक आम आदमी कैसे हिम्मत से बड़ा बदलाव ला सकता है। उनका "मोहम्मद दीपक" कहना वायरल हुआ, और कई लोग उनकी तारीफ कर रहे हैं। लेकिन कुछ ट्रोल भी कर रहे हैं। कुल मिलाकर, ये घटना हमें सिखाती है कि शब्दों को धर्म की जंजीरों में मत बांधो। भारत की ताकत उसकी विविधता है, जहां हिंदू, मुस्लिम, सिख सब साथ रहते हैं। आगे चलकर, ऐसे मामलों में बातचीत से हल निकालना चाहिए, न कि हंगामा से। क्या हम ऐसी घटनाओं से सीखकर बेहतर बन सकते हैं? हां, अगर हम अपनापन बढ़ाएं। ये बहस विचार करने लायक है, क्योंकि छोटे विवाद बड़े मुद्दों को छिपा देते हैं, जैसे रोजगार या शिक्षा। अंत में, "बाबा" जैसे शब्द हमें जोड़ने के लिए हैं, तोड़ने के लिए नहीं।

भारत-अमेरिका व्यापार समझौता

हीरों से रेशम तक सस्ता निर्यात, लेकिन शर्तों का खेल

भारत और अमेरिका के बीच हाल ही में एक अंतरिम व्यापार समझौता हुआ है, जो दोनों देशों के लिए बड़ा कदम है। यह समझौता फरवरी 2026 में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के बीच तय हुआ। पहले अमेरिका ने भारत पर रूस से तेल खरीदने के कारण 50% तक ऊंचा टैरिफ लगा दिया था, जिससे भारतीय निर्यातकों को बहुत नुकसान हुआ। अब यह टैरिफ घटाकर 18% कर दिया गया है, और कुछ चीजों पर तो बिल्कुल शून्य कर दिया गया। यह बदलाव भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए राहत की सांस है, क्योंकि अमेरिका भारत का सबसे बड़ा निर्यात बाजार है। वहां हर साल करीब 86 अरब डॉलर की भारतीय चीजें जाती हैं। समझौते से छोटे-बड़े कारोबारियों को फायदा होगा, खासकर उन इलाकों में जहां निर्यात पर निर्भरता ज्यादा है, जैसे सूरत के हीरा कारोबार या तिरुपुर के कपड़ा उद्योग। लेकिन यह सिर्फ टैरिफ कम करने की बात नहीं है; इसमें भारत को अमेरिकी सामान पर भी टैरिफ घटाना पड़ेगा और रूस से तेल खरीदना बंद करना होगा। इससे दोनों देशों के रिश्ते मजबूत होंगे, लेकिन भारत को अपनी ऊर्जा जरूरतों के लिए नए रास्ते तलाशने होंगे। कुल मिलाकर, यह समझौता व्यापार घाटे को कम करने और नौकरियां बढ़ाने का मौका देता है, लेकिन क्या यह लंबे समय तक चलेगा? यह सवाल विचार करने लायक है, क्योंकि अंतरराष्ट्रीय राजनीति में बदलाव तेज होते हैं। समझौते से भारतीय निर्यात में 20-30% की बढ़ोतरी की उम्मीद है, जो अर्थव्यवस्था को गति देगी। फिर भी, विशेषज्ञ कहते हैं कि भारत को अपनी उत्पादन क्षमता बढ़ानी होगी ताकि अमेरिकी बाजार में ज्यादा हिस्सा मिल सके। यह समझौता सिर्फ आर्थिक नहीं, बल्कि रणनीतिक भी है, क्योंकि इससे भारत अमेरिका के करीब आ रहा है और चीन जैसे प्रतिद्वंद्वियों पर बढ़त ले रहा है। कुल मिलाकर, यह एक संतुलित कदम लगता है जो दोनों पक्षों को फायदा पहुंचा सकता है, लेकिन इसके प्रभाव को समय के साथ देखना होगा।

18% टैरिफ वाली मुख्य चीजें

इस समझौते में कई भारतीय निर्यात चीजों पर अमेरिका ने 18% टैरिफ लगा दिया है, जो पहले 50% था। ये चीजें वे हैं जो अमेरिका खुद भी बनाता है या जिनमें प्रतिस्पर्धा ज्यादा है। सूची में कपड़े और परिधान शामिल हैं, जैसे रेडीमेड गारमेंट्स, कालीन, हाथ से बने टेक्सटाइल और कॉटन के कपड़े। इसके अलावा चमड़े के सामान, जूते-चप्पल, प्लास्टिक और रबर की चीजें, रसायन, रबर उत्पाद, खिलौने, खेल का सामान, घर सजावट की वस्तुएं, मशीनरी और उसके पार्ट्स, ऑटोमोबाइल कंपोनेंट्स, और तैयार ज्वेलरी भी इस श्रेणी में आते हैं। हीरों की तैयार ज्वेलरी और लैब में बने हीरे भी 18% टैरिफ के दायरे में हैं। ये सभी चीजें भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि ये श्रम-गहन क्षेत्र हैं जहां लाखों लोग काम करते हैं। उदाहरण के लिए, तिरुपुर और भदोही जैसे इलाकों में कपड़ा और कालीन निर्यात से हजारों परिवारों की रोजी चलती है। 18% टैरिफ से इनकी कीमत अमेरिकी बाजार में कम हो जाएगी, जिससे बिक्री बढ़ सकती है। लेकिन चीन (35%), वियतनाम (20%) और बांग्लादेश (20%) जैसे देशों पर ज्यादा टैरिफ होने से भारत को फायदा मिलेगा। फिर भी, भारतीय निर्यातकों को गुणवत्ता और कीमत पर ध्यान देना होगा ताकि वे इस मौके का पूरा फायदा उठा सकें। यह टैरिफ उन चीजों पर है जो अमेरिका अपनी सुरक्षा या घरेलू उद्योग बचाने के लिए लगाता है। कुल मिलाकर, यह सूची व्यापक है और इसमें हीरों से लेकर रेशम तक की चीजें शामिल हैं, लेकिन रेशम पर अलग से छूट है। विशेषज्ञों का मानना है कि यह बदलाव भारतीय एमएसएमई को मजबूत करेगा, लेकिन क्या इससे नौकरियां बढ़ेंगी या सिर्फ बड़े खिलाड़ी फायदे में रहेंगे? यह एक विचारणीय बिंदु है, क्योंकि छोटे कारोबारी टैरिफ कम होने से ज्यादा निर्यात कर सकते हैं। समझौते से इन क्षेत्रों में निवेश बढ़ सकता है, जो लंबे समय में फायदेमंद होगा।

समझौते की पृष्ठभूमि और जरूरत

शून्य टैरिफ वाली महत्वपूर्ण वस्तुएं

समझौते की अच्छी बात यह है कि कई चीजों पर अमेरिका ने टैरिफ पूरी तरह हटा दिया है, यानी 0% कर दिया। इनमें मुख्य रूप से जेम्स और डायमंड्स शामिल हैं, जैसे कटे हुए हीरे, रत्न, प्राकृतिक मोती, प्लेटिनम, सिक्के और अन्य कीमती पत्थर। इसके अलावा जेनेरिक दवाएं, फार्मास्यूटिकल्स, एयरक्राफ्ट पार्ट्स, मशीनरी के बेसिक पार्ट्स, आवश्यक तेल, घड़ियां, मिनरल्स और प्राकृतिक संसाधन भी शून्य टैरिफ के दायरे में हैं। रेशम, मसाले, चाय, कॉफी, नारियल तेल, काजू, एवोकाडो, केला, आम, अनानास जैसे फल, मशरूम, बेकरी उत्पाद और कुछ अन्य कृषि चीजें भी इसमें आती हैं। ये सभी वस्तुएं भारत के लिए बड़ा निर्यात स्रोत हैं, जैसे सूरत और मुंबई के हीरा केंद्र जहां 9-10 अरब डॉलर का सालाना निर्यात होता है। शून्य टैरिफ से इनकी कीमत अमेरिकी बाजार में और सस्ती हो जाएगी, जिससे बिक्री बढ़ेगी। फार्मा सेक्टर को भी फायदा होगा, जहां 13 अरब डॉलर का निर्यात है। स्मार्टफोन पार्ट्स पहले से ही शून्य टैरिफ पर हैं। यह छूट उन चीजों पर है जो अमेरिका खुद नहीं बनाता या जिनकी जरूरत आयात से पूरी होती है। इससे भारतीय किसानों और निर्यातकों को सीधा लाभ मिलेगा, खासकर कृषि उत्पादों में। लेकिन लैब में बने हीरे इस छूट से बाहर हैं। कुल मिलाकर, यह सूची भारत की ताकत वाले क्षेत्रों को मजबूत करती है और अमेरिकी बाजार में 113 अरब डॉलर का अवसर देती है। विचार करने वाली बात यह है कि क्या इससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था मजबूत होगी या सिर्फ बड़े निर्यातक फायदे में रहेंगे? क्योंकि छोटे किसान भी इन चीजों से जुड़े हैं। समझौते से इन क्षेत्रों में नई तकनीक और निवेश आ सकता है, जो विकास को गति देगा।

समझौते की महत्वपूर्ण शर्तें

यह समझौता सिर्फ टैरिफ कम करने तक सीमित नहीं है; इसमें कई महत्वपूर्ण शर्तें हैं जो भारत को माननी होंगी। सबसे बड़ी शर्त है रूस से कच्चा तेल खरीदना बंद करना, क्योंकि पहले इसी कारण अमेरिका ने 25% अतिरिक्त टैरिफ लगाया था। अब भारत को अपनी ऊर्जा जरूरतों के लिए अमेरिका या अन्य देशों की ओर देखना होगा। दूसरी शर्त है अमेरिकी सामान पर टैरिफ घटाना या हटाना, और गैर-टैरिफ बाधाएं खत्म करना। भारत को "बाय अमेरिकन" नीति अपनानी होगी और अमेरिकी ऊर्जा, तकनीक, कृषि उत्पादों की बड़ी खरीद करनी होगी, जिसकी कीमत 500 अरब डॉलर से ज्यादा अनुमानित है। यह समझौता अंतरिम है, यानी अस्थायी, और पूर्ण समझौते के लिए और बातचीत होगी। अगर भारत शर्तें नहीं मानेगा, तो टैरिफ फिर बढ़ सकते हैं। इससे भारत को फायदा तो है, लेकिन अपनी स्वतंत्रता पर असर पड़ सकता है। विशेषज्ञ कहते हैं कि यह रणनीतिक कदम है, क्योंकि इससे भारत अमेरिका के साथ मजबूत गठबंधन बना रहा है और चीन पर दबाव बढ़ा रहा है। लेकिन क्या इससे भारतीय किसानों पर असर पड़ेगा? क्योंकि अमेरिकी कृषि उत्पाद सस्ते हो सकते हैं। समझौते में जीएम संशोधित उत्पादों को अनुमति नहीं है, जो भारतीय कृषि की रक्षा करता है। कुल मिलाकर, ये शर्तें संतुलित लगती हैं, लेकिन भारत को सावधानी से कदम उठाने होंगे ताकि घरेलू उद्योग प्रभावित न हों। यह समझौता व्यापार को बढ़ावा देगा, लेकिन अंतरराष्ट्रीय राजनीति के बदलते माहौल में इसका स्थायित्व सवालों में है। विचारणीय है कि क्या भारत अपनी ऊर्जा सुरक्षा को बिना जोखिम के बनाए रख पाएगा।

भारत पर समझौते का प्रभाव और भविष्य

इस समझौते से भारत की अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा, लेकिन कुछ चुनौतियां भी हैं। निर्यात बढ़ने से नौकरियां बढ़ेंगी, खासकर श्रम-गहन क्षेत्रों जैसे टेक्सटाइल, ज्वेलरी और कृषि में। अनुमान है कि निर्यात में 20% की बढ़ोतरी हो सकती है, जो जीडीपी को गति देगी। सूरत, जयपुर, तिरुपुर जैसे शहरों में कारोबार फिर पटरी पर आएगा, जहां पहले टैरिफ से नुकसान हुआ था। भारत को चीन और वियतनाम पर बढ़त मिलेगी, क्योंकि उन पर ज्यादा टैरिफ है। लेकिन शर्तों से भारत को अमेरिकी उत्पाद ज्यादा खरीदने होंगे, जो घरेलू उद्योग पर दबाव डाल सकता है।

ऊर्जा क्षेत्र में रूस से कटौती से कीमतें बढ़ सकती हैं। फिर भी, यह समझौता "मेक इन इंडिया" को बढ़ावा देगा और निवेश आकर्षित करेगा। विशेषज्ञों का कहना है कि इससे एमएसएमई मजबूत होंगे और युवाओं को रोजगार मिलेगा। लेकिन क्या यह संतुलित है? क्योंकि विपक्ष कहता है कि यह अमेरिका के फायदे में ज्यादा है। कुल मिलाकर, यह एक विचारणीय कदम है जो भारत को वैश्विक बाजार में मजबूत बनाता है, लेकिन घरेलू हितों की रक्षा जरूरी है। भविष्य में पूर्ण समझौते से और फायदे हो सकते हैं, लेकिन राजनीतिक बदलाव इसका असर कर सकते हैं। यह समझौता दिखाता है कि व्यापार सिर्फ आर्थिक नहीं, बल्कि रणनीतिक भी होता है।

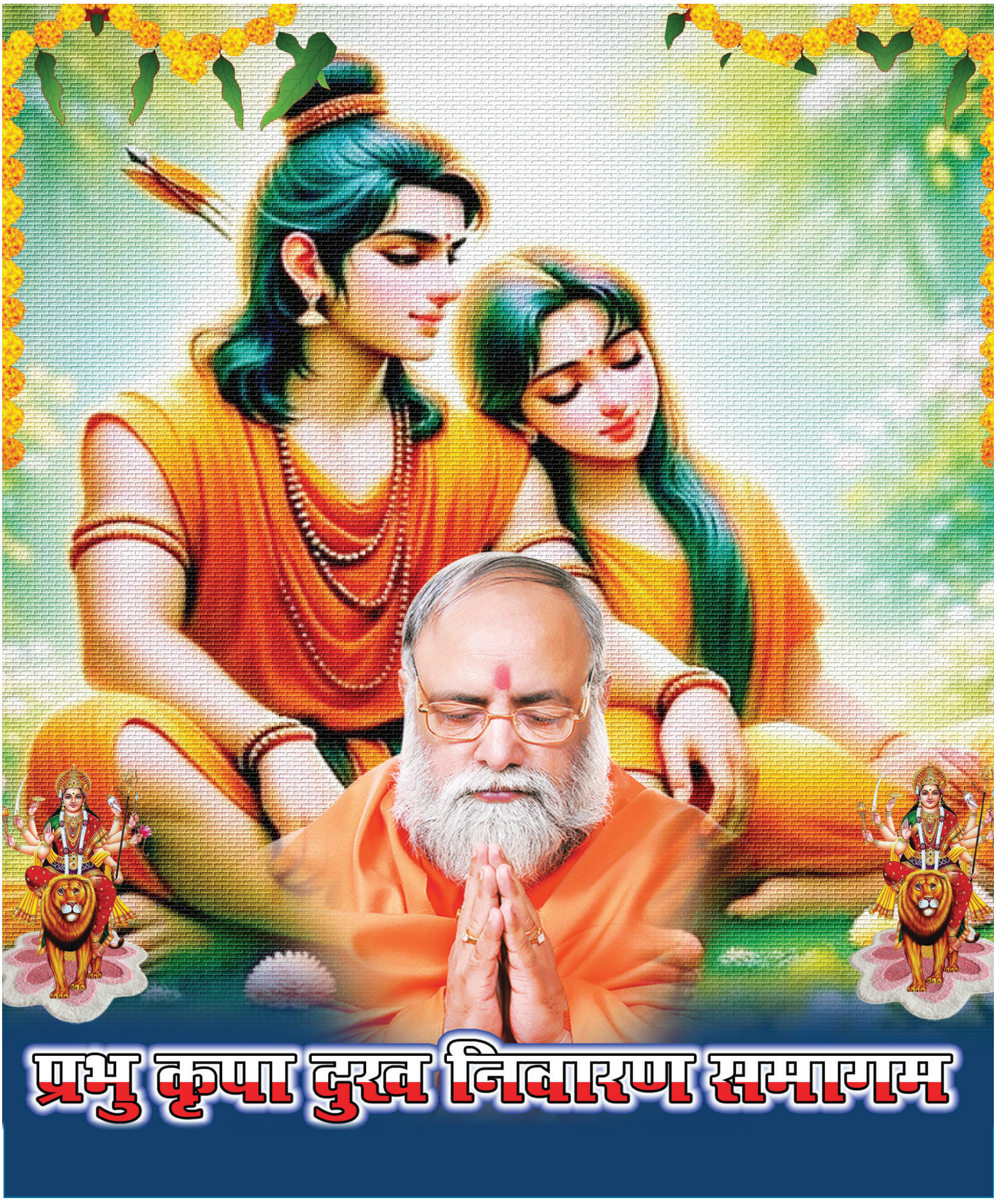
प्रभु कृपा दुख निवारण समागम

BY

Arihanta Industries

ULTIMATE HAIR SOLUTION

- BHRINGRAJ
- AMLA
- REETHA
- SHIKAKAI

100 ML

15 ML

NO ARITIFICIAL COLOR FRAGRANCE CHEMICAL

KESH VARDAK SHAMPOO

The complete solution of all hair problems:

- Prevent hair fall and make hair follicle strong.
- Promote hair growth.
- Free from all artificial & harmful chemicals like., SLS.
- 100% pure ayurvedic shampoo.
- Suitable for all hair types.

ORDER ONLINE @ :

amazon

arihanta.in

Arihanta Industries